ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार,16 मार्च 2014

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 16 मार्च 2014 से 22 मार्च 2014

फा. शु. पूर्णिमा ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 78, अंक 99, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य युवा समाज जलालाबाद के नेतृत्व में हुईं विभिन्न सामाजिक सेवाएँ

डी ए.वी. सेंटेनरी सेकेन्डरी पब्लिक स्कूल जलालाबाद द्वारा आर्य युवा समाज इकाई की ओर से समाज सेवा सप्ताह मनाया गया जिसमें विद्यालय के सभी छात्र–छात्राओं, अध्यापकों व प्राध्यापकों ने योगदान दिया। इस अवसर पर सेवा यज्ञ के रूप में फिरोजपुर अनाथालय के 107 बच्चों को पठन–पाठन सामग्री वितरित की गई। खाद्य सामग्री वितरित की गई। इसके अतिरिक्त रोजमर्रा में काम आने वाली वस्तुएँ जैसे टुथ–ब्रश, साबुन, टुथ–पेस्ट, टैलकम पाऊडर, कंघी व फेस क्रीम इत्यादि दिए गए। गरीबों, विकलांगों व निराश्रितों के चेहरे पर मुस्कान लाने के लिए छोटी सी कोशिश विद्यालय द्वारा की गई।

झुग्गी–झोंपड़ियों में रहने वाले लोगों में मिष्ठान व सर्दी निवारण हेतु गर्म स्वेटर वितरित किए गए। उनके मुख पर एक हर्ष की लहर दौड़ती देखकर हमें भी आत्म संतुष्टि की अनुभूति हुई।

प्राकृतिक संसाधनों व पर्यावरण संरक्षण हेतु व ईधन, पैट्रोल व डीजल आदि की बचत हेतु एक प्रदर्शन रैली निकाली गई जिसके जरिए लोगों को वाहन उपयोग पर नियंत्रण के लिए प्रेरित किया गया। नागरिकों को जल संरक्षण एवं मितव्ययता के प्रति भी आगाह किया गया। वृक्षारोपण अभियान भी चलाया गया जिसमें 300 के करीब विभिन्न–विभिन्न स्थानों पर बच्चों के कर–कमलों द्वारा पौधे लगवाए गए ताकि उनके मन में प्रकृति के प्रति प्रेम व श्रद्धा की भावना पैदा हो सके और प्रकृति और मानव के अटूट रिश्ते के प्रति जागरूक हो सकें।

नियमित हवन यज्ञ भी हो रहा है जिसमें बच्चों को वैदिक संस्कारों के साथ–साथ एक अच्छा इन्सान बनाना, चरित्र निर्माण व अच्छे आचार के लिए प्रेरित किया जाता है ताकि वे आगे जाकर एक सुदृढ व स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकें।

डी.ए.वी. जसोला विहार (दिल्ली) में हुआ पुरस्कार वितरण उत्सव

डी ए.वी. पब्लिक स्कूल, जसोला विहार में वार्षिकोत्सव का भव्य आयोजन किया गया। दीप–प्रज्ज्वलन तथा पुष्पों द्वारा कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया।

विद्यालय की वार्षिक रिर्पोट की प्रस्तुति के पश्चात् कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री एस.आर. अरोड़ा जी, अध्यक्ष डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल ने उपस्थित शिक्षकों, विद्यार्थियों तथा अभिभावकों को संबोधित किया। इसके साथ ही विद्यालय की पत्रिका–'हॉरिज़न' का लोकार्पण किया गया।

'अवार्ड सेरेमनी' में विद्यालय का नाम रोशन करने वाले छात्र–छात्राओं को सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में आगे नव रंगो से सजे रंगारंग कार्यक्रम 'नवरंग' की प्रस्तुति दी गई। कहीं सूर्य नमस्कार दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किए गए तो कहीं बाल–मज़दूरी व नारी–शक्ति जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को भी प्रस्तुति के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया। अंग्रेज़ी नाटक ने एक अद्भुत समां बांधा तो वहीं शक्ति, भावुकता तथा प्रेम व रास से भरे नृत्य–संगीत ने दर्शकों का मन मोह लिया। इस प्रकार विभिन्न रंगों की महमोहक प्रस्तुति ने अतिथियों सहित सभी दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। सभी ने विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

विद्यालय के प्राचार्य डॉ.वी के बड़थ्वाल जी ने सभी शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के परिश्रम तथा मनमोहक प्रस्तुति की सराहना की तथा भविष्य में भी इस प्रकार के आयोजन किए जाने का आश्वासन दिया। कार्यक्रम के अंत में 'राष्ट्र गान' के साथ ही कार्यक्रम का सफलतापूर्वक समापन हो गया।

डी.ए.वी. हुडको भिलाई ने ली सुध जल संरक्षण की

डी ए.वी. पब्लिक स्कूल हुडको भिलाई द्वारा जल संरक्षण पर केन्द्रित एक सार्थक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। प्रातः कालीन प्रार्थना सभा जल संरक्षण जैसे गहन आधारभूत समस्या पर आधारित रही। समूचा प्रांगण बच्चों व शिक्षकों की गरिमामयी उपस्थिति से स्वयमेव गौरवान्वित हो उठा था। नन्हें बच्चों के हाथ तख्तियॉ लेकर जल संरक्षण का अमृत संदेश दे रहे थे। शालेय विद्यार्थियों द्वारा विविध संदेशपरक कार्यक्रमों की प्रस्तुति दी गयी। नन्हें मुन्ने बच्चों द्वारा अपने अंतर्मन की बात भाषण के माध्यम से कही गयीं। कर्णप्रिय गीतों के माध्यम से जल संरक्षण की महत्ता को प्रतिपादित की गयी। चित्रकला भी जीने की कला सिखा रही थी। विद्यार्थियों ने आयोजन सोत्साह में भाग लेकर जल संरक्षण पर केन्द्रित कार्यक्रम को उन्नत ऊँचाई प्रदान की।

जल संरक्षण पर सृजित समूहगीत–''खुशहाल रहे हर प्राणी, बचाओं थोड़ा–थोड़ा पानी।'' की सम्मोहक प्रस्तुति दी गई। भाषण के माध्यम से जल संरक्षण की महत्ता को उद्घाटित किया गया। हर एक व्यक्ति का जुड़ाव इस जल संरक्षण के साथ होना, वर्तमान युग का तकाजा है।''

संरक्षण की पर आधारित नाटक का प्रदर्शन न केवल मनोरंजक अपितु शिक्षाप्रद रहा।

प्राचार्य श्री प्रशांतकुमार जी ने कहा कि–''जल संरक्षण के लिए हम सब को भागीरथ प्रयास करना होगा। जल ही जीवन है और जल के अभाव में जीवन औचित्यहीन हो जाएगा। कार्यक्रम की सफलता में बच्चों की भागीदारी के लिए हार्दिक धन्यवाद देते हुए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की।

जल संरक्षण के लिए जागृति का संदेश देकर और यादगार बनाने का दृढ़संकल्प सराहनीय प्रयास रहा।

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 16 मार्च, 2014 से 22 मार्च, 2014

देवों के मार्ग पर चलें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवाम तदनुप्रवोढुम्।
आग्निर्विद्वान्त्स यजात् स इद्धोता, सोऽध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति।।

अथर्व 19.59.3

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**अपि**) क्या (**देवानां**) देवों के (**पन्थां**) मार्ग पर (**आ–अगन्म**) [हम] चलें? [हाँ], (**यत्**) यदि (**तत् अनुप्रवोढुम्**) उस पर स्वयं को चलने में (**शक्नवाम**) समर्थ हों। (**अग्निः**) आत्मा (**विद्वान्**) विद्वान है, (**सः**) वह (**यजात्**) यज्ञ करे, (**सः**) वह (**इत्**) सचमुच (**होता**) होम–निष्पादक है। (**सः**) वही (**अध्वरान्**) यज्ञों को और (**सः**) वही (**ऋतून्**) ऋतुओं को (**कल्पयाति**) रचाये।

● आओ, हम देवों के मार्ग पर चलें। यज्ञ के तंतु से बंधे रहना ही देवों का मार्ग है। देखो, ये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथिवी, ऋतु, संवत्सर आदि देव कैसे 'यज्ञ' के मार्ग पर चल रहे हैं। कभी उनके यज्ञ–पालन में व्यतिक्रम नहीं होता। शरीर में भी मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि देव कैसे संगठित हो देवयान का अवलम्बन कर शरीर–यज्ञ को चला रहे हैं। समाज में भी 'देव' पदवी को पाये हुए महापुरुष 'यज्ञ' के ही पथ पर चला रहे हैं। और, सबसे बड़ा देवों का देव परमात्मा भी निरन्तर देव–मार्ग पर चलता हुआ इस ब्रह्मांड–यज्ञ का सम्पादन कर रहा है। हम चाहते हैं कि हम भी इस देव–मार्ग के पथिक बनें। क्या तुम चाहते हो कि इस मार्ग पर चलना अति कठिन है, तलवार की धार पर चलने के समान है, अतः पहले शक्ति को तोल लो कि तुम इस पर स्थिर रह भी सकोगे या नहीं, उसके पश्चात् इस मार्ग पग बढ़ाना? सुनो, हमने अपने सामर्थ्य को भलीभांति परख लिया है। हमारा आत्मा 'अग्नि' है, अग्रणी है, तेज का पुंज है, ज्योतियों की ज्योति है। वह 'विद्वान्' है, देवों की राह पर चलना और चलाना जानता है। अतः हमें देव–प्रदर्शित यज्ञ–मार्ग से भटक जाने का कोई भय नहीं है। हम निश्चिंत होकर उसके हाथों में अपनी 'यज्ञ' की पतवार सौंप रहे हैं। वह 'होता' है, यज्ञ–निष्पादन में कुशल है, संस्कृत हवि का होम करने में निष्णात है। वह जानता है कि यज्ञ को 'अध्वर' अर्थात् हिंसा–रहित ही होना चाहिए। भद्रजनों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया यज्ञ यज्ञ नहीं है। हमारा आत्मा 'अध्वर' यज्ञों को रचाये और वही यह भी देखे कि किस यज्ञ के लिए कौन सी ऋतु, कौन सा समय उपयुक्त है, क्योंकि काल–अकाल का विचार किये बिना प्रारंभ किया गया या सफल नहीं होता। आओ, हम देव–पथ के पथिक बनें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

तत्त्व-ज्ञान

● महात्मा आनन्द स्वामी

वेद मंत्र का हवाला देकर स्वामीजी ने बताया कि जब स्थूल शरीर से लेकर सूक्ष्म से सूक्ष्म इन्द्रिय तथा भावना तक सारे के सारे आत्मा के सच्चे मित्र और संगी बनकर प्रभु से युक्त होने के लिए कटिबद्ध हो जाते हैं प्रभु की कृपा स्वयमेव प्रकट हो जाती है। लेकिन यह सब कुछ करने पर भी जीवात्मा प्रसन्न न हो तो समझो एक बात अभी पैदा नहीं हुई और वह है 'अनन्य भक्ति'। इस विषय में भगवान् वेदव्यास और देवर्षि नारद का एक प्रसंग भी सुनाया।

इसी अनन्य भक्ति को योगदर्शन में ईश्वर प्रणिधान कहा गया है और गीता में 'शरणागति'। महर्षि स्वामी दयानन्द ने इसका नाम 'उपासना' रखा है। उन्होंने यह भी कहा कि उपासना का फल' ईश्वर के अनुग्रह ही से प्राप्त होता है।

ईश्वर में यह विशेष भक्ति कैसे की जाती है। यह भी महर्षि ने बताया है। 'ओ३म्' नाम का जप, अर्थ विचार सहित, सदैव करते रहने से व्यक्ति के हृदय में परमात्मा का प्रकाश और उसकी प्रेमभक्ति सदा बढ़ती जाती है। भक्त के हृदय से ईर्ष्या, द्वेष आदि क्षुद्र भाव तिरोहित हो जाते हैं और एक ही तत्त्व 'प्रेम' हृदय में रहता है। प्रेम का बल भक्त को परमात्मा की ओर खींचता लिए जाता है। कबीर और रहीम ने भी यही कहा है।

स्वामीजी ने भगवान नारद, वेद भगवान, मीरा, का उदाहरण देकर अपनी बात की पुष्टि की। इस प्रक्रिया में 'ओ३म्' का जप रुदन में भी बदलता है, तब साधक अपनी त्रुटियों का ध्यान कर परमात्मा की दया–दयालुता की पुकार करता है।

अब आगे...

मेरे लिए कब?

तू तड़पते हुए चातक के लिए स्वाति–बूँद लाता है, सूखती खेती के लिए वृष्टि लाता है, सारे प्राणियों की क्षुधा मिटाने के लिए हर प्रकार का अन्न उपजाता है। तेरी ये सारी शक्तियाँ मेरे काम कब आएँगीं? सुना है तू ही था जिसने सुषुप्त प्रकृति में अपनी नन्हीं सी सामर्थ्य से वह गति उत्पन्न की कि यह सारी सृष्टि मूर्तिमान होकर सामने आ खड़ी हुई। दतने बड़े विशाल संसार के धारण करने में, प्यारे! जब तुझे कुछ भी श्रम नहीं हुआ तो हे सब शक्तियों के स्वामी! मैं तेरा भक्त तो एक परमाणुरूप भी नहीं। मुझे सन्तोष देने में तुझे क्या श्रम होगा?

क्या मेरा रुदन सहन कर लोगे?

यही विचार करते–करते मेरे नेत्र जल बारसाने लगते हैं कि यदि और प्रकार से नहीं तो रुदन देखकर तो तुम्हारा हृदय अवश्य द्रवित हो उठेगा:

कबीरा हँसना दूर कर, रोने से कर चीत।
बिन रोये क्यों पाइये, प्रेम पियारा मीत।।
हँस–हँस कंत न पाइया, जिन पाया तिन रोय।
हँसे खेलें पिव मिले, कौन दुहागिन होय।।

भागवत में भी तो यही कहा है:

कथं विना रोमहर्ष द्रवता चेतसा विना।
विनाऽऽनन्दाश्रुकलया शुद्ध्येद् भक्त्या
विनाऽऽशयः।।

भाग. 14।22।।

'रोमाञ्च के बिना, भगवत्–चिन्तन से पिघले हुए चित्त के बिना और आनन्द से उत्पन्न अश्रु–बिन्दु, कैसे भक्ति प्रतीत होती है और भक्ति के बिना अन्तःकरण कैसे शुद्ध हो सकता है?

शिशु का रुदन माता सहन नहीं कर सकती; फिर जब हटकोरे ले रहा हो तब तो माता सौ काम छोड़कर उसे गोद में उठा लेती है।

'माँ! रोते–रोते मेरी भी हिचकी बँध रही है। रोता ही रहूँगा, रोता ही रहूँगा, जब तक तू अमृत नहीं पिलाएँगी, रोता रहूँगा।

माँ! मुझे मुक्ति न दे, बार–बार जन्म ही देती रह, परन्तु साथ ही अपनी अनुग्रह और कृपा दृष्टि भी। तभी तो तेरे दर्शन हो सकेंगे!'

ऐसे ही घंटों व्यतीत हो जाते हैं। रोते–रोते हृदय की मैल धुल जाती है। एक अद्‌भुत, पवित्रता, निरभिमानता, दीनता, सहनशीलता और दयालुता का प्रवाह हृदय से बहने लगता है। भक्त को ऐसा प्रतीत होने लगता है कि वह सच्ची माता, वह प्रियतम, वह प्यारा, वह सबसे सुन्दर आ पहुँचा है। आकर बैठ गया है

हृदय मन्दिर में। कितनी सुन्दर शोभा है उसकी! सारे तत्त्वों से निखरा हुआ, अन्तिम तत्त्व आकाश से भी ऊपर। ओह! कितनी शुभ्र, कितनी चित्ताकर्षक ज्योति और आभा है! प्रकाश–ही–प्रकाश तम का किसी कोर में चिन्ह्न भी नहीं और हृदय ही में क्यों, खुली आँखों के सामने। यह विभिन्न पदार्थों में, चन्द्र में, पृथ्वी में, जल में, वृक्षों में वनस्पतियों में, सबमें तू ही आकर बैठ गया है। हाँ, तू ही–

जग में आकर इधर–उधर देखा।
तू ही आया नज़र जिधर देखा।।
भक्त गया वाटिका में

भक्त चला गया वाटिका में। वहाँ नाना प्रकार के पुष्प खिल रहे थे। माली माला गूँथने के लिए फूल तोड़कर टोकरी में डाल रहा था। भक्त माली से कहने लगा:–

हार गूँथकर कहाँ जाएगा उसे ढूँढने तू माली।
देख! इन्हीं पुष्पों के अन्दर उसकी मूरति मतवाली।।
रूप रङ्ग सौरभ पराग में भरा उसी का प्यारा रूप।
जिसके लिए इन्हें चुन–चुन कर हार गूँथता तू अपरूप।।

फिर देखो, युग बीते, युगान्तर बीते, जन्म हुए, मृत्यु आई, फिर जन्म हुए। कितना पुराना हो गया यह संसार! परन्तु फूलों की सुगन्ध पुरानी न हुई। श्यामल तृण–गुच्छ, नवीन पत्रावली, नई–नई कलियाँ, नई कोंपलें, यह सब कुछ वैसे का वैसा और यह ऊपर के अगणित तारक–तारिकाओं से विमण्डित सुनील नभोमण्डल, वह नवजात अरुण रवि की रक्त किरणें, नित्य नई कला परिवर्तन करने वाला चन्द्र फिर अमावस्या का घन–कृष्ण अन्धकार, ये सब नए ही बनकर आ जाते हैं। फिर यह थकी हुई दुनिया, कुम्हलाए मुखमण्डल, प्रतिदिन प्रातः तरूण, ताजा हो जाते हैं। कौन है वह जो प्रभात होने से पहले ही इस सबको नहला, धुला, सजा, बनाकर रख देता है? भक्त ने देखा– यह तो उसी का प्राणप्यारा, है; सारे प्रणियों, सारी वनस्पतियों, सारी ज्योतियों, अग्नियों, सूर्यों, चन्द्रों तथा तारा– मण्डलों का प्राण प्रभु ही है।

भक्त फिर कहता है।

जब सबके पास यह पहुँचता है, सभी को प्राण देता है तो मेरी बेर आते ही क्या सारी प्रभुताई भूल जाती है? क्या मैं भी इसी संसार का एक नन्हा–सा अकिञ्चन जीव नहीं हूँ? अब भक्त प्रेम भक्ति में अधिक उन्मत्त हो उठता है। विचारधार बदलती है। जहाँ अगाध प्रेम हो, वहीं शिकायत भी होने लगती है। भक्त ने अब वैसा रूप धारण किया और कहने लगा, तेरी लीला भी देख ली और महिमा भी, परन्तु इन दोनों से तू परे ही रहा। फिर भी तेरी महिमा के गीत तो भक्त ही गाते हैं। तुझे भगवान् तो हम ही बनाते हैं। भक्त न हों तो भगवान् कहाँ? तेरी सत्ता हमारी ही सत्ता है। एक उर्दू कवि ने तो यह भी कहा डाला:

खयाल मेरे की यह बुलन्दी
किया है पैदा खुदा को मैंने।

फिर इतना भी हठ क्या? जब भक्त पुकार रहा है तो इस पर करूणा–कृपा–दृष्टि क्यों नहीं?

भक्त का अल्टीमेटम

सुना है एक भक्त तो प्रेमवश रूठा ही बैठा और रूठने की सीमा से और आगे बढकर 'दावा–दायर' कर देने की धमकी देने लगा:

तारिहो न शम्भो! तो हम अम्ब की अदालत में,
नेह को वकील करि, नालिश लगाएँगे।।
वादा सदा तारिबे को, कीन्हो त्रिपुरारि आप,
अब इन्कार, यही दावा लिखाएँगे।।
दावा तो जवाब में कहोगे, यह पातकी है,
तो अनेक पापिन की, नजीर दिखलाएँगे।।
ऐसे हू पे नाहिंन जो तारोगे दिगम्बर! तो,
कोष करूणा को, सबै कुरक करवाएँगे।।

परन्तु यहाँ तक नौबत नहीं आने की। भक्त को इतना अधीर नहीं होना होगा। अल्टीमेटम देने की आवश्यकता नहीं, आवश्यकता केवल इतनी है कि भक्त या साधक अपना हृदय भगवान् के अर्पण कर दे। उसी के सामने बिक जाए। भक्त के हृदय–मन्दिर से अपने ही प्यारे प्रभु की जोत जले। शेष सारा कूड़ा–करकट उस प्रेम–अग्नि में भस्म हो जाय। भक्त के समक्ष केवल दो पदार्थ रह जाएँ–एक भक्त, दूसरा भगवान्। इसके सिवा और कोई वस्तु न रहे। भक्ति का सूर्य चढता ही तब है जब बाकी सारे संसारी पदार्थों, ममताओं, आसक्तियों की काली घनघोर घटाएँ छिन्न–भिन्न हो जाती हैं। भक्ति का उदय होने से पूर्व सारे विषयों से उपरामता हो जाती है। और फिर भक्ति का रंग चढ़ते ही उसे 'ईश्वर' ही की बातें प्रिय लगने लगती हैं। जब किसी युवती अथवा युवक के विवाह का प्रस्ताव हो जाता है तो यह स्वाभाविक है कि जब कभी भी युवक अथवा युवती की बात छिड़ जायँ, तो युवती और युवक पूरे चाव से तन्मय होकर उसे सुनते हैं। भक्त की अवस्था भी ऐसी ही होती है। जब श्रवण–मनन करते–करते पर्याप्त समय बीत जाता है, तब अपने प्यारे प्रभु से तन्मय हो जाने की धुन सवार हो जाती है। किसी व्यक्ति के प्रति जब अनुराग बढ़ता है तो उसे देखने–सुनने तथ स्पर्श करने के लिए एक स्वाभाविक इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इसी को तो प्रेम या प्यार कहते हैं। यही प्यार जब भगवान् के प्रति हो तो फिर यही प्यार भक्ति कहलाता है। जब यह अवस्था हो जाती है तो फिर भक्त क्षणभर का भी विरह सहन नहीं कर सकता। वह चाहता है दर्शन, मिलाप और प्रभु से एक हो जाना, जैसे लोहा अग्नि की गोद में जाकर अग्निरूप हो जाता है।

परन्तु यहाँ तक पहुँचने के लिए यह जान लेना आवश्यक है कि भक्ति एक ही प्रकार की नहीं होती। इसके भी कितने ही रूप सामने आते हैं। भक्ति के तीन प्रकार ये हैं– (1) तामसी भक्ति, (2) राजसी भक्ति, (3) सात्त्विकी भक्ति। (1) तामसी भक्ति तो वह है जब मनुष्य केवल संसारी स्वार्थ सिद्धि के लिए यत्न करता है। (2) राजसी भक्ति यह है कि सांसारिक स्वार्थों की प्राप्ति के साथ कुछ परोपकार की भावना हो जाती है। 3) सात्त्विकी भक्ति यह है कि केवल कर्त्तव्य जानकर या जन्म–जन्मान्तरों की एकत्रित वासनाओं को नष्ट करने के अभिप्राय से ईश्वर–कृपा प्राप्त करने के हेतु भक्ति की जाए। यही भक्ति फिर परा–भक्ति तक पहुँचा देती है। परा–विद्या तथा परा–भक्ति से नित्य ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

(1) **आर्त्त–** दुः ख, पीड़ा कष्ट में परित्राण की इच्छा लेकर भगवान् को पुकारने वाले भक्त। (2) **जिज्ञासु**– प्रभु की खोज में निकले हुए भक्ति का मार्ग चाहने वाले भक्त। (3) **अर्थार्थी–** जो भोग तथा विषयों की कामना की पूर्ति में लगे हुए हैं, तथा (4) ज्ञानी– जो पूरे ज्ञानवान् होकर श्रद्धा–प्रेम से प्रभु भजन तथा प्रभु आज्ञा का पालन करते हैं और बिना कामना एवं बिना किसी लोभ के सर्वथा स्वार्थ रहित होकर भगवद्–भजन में ही तत्पर रहते हैं।

अन्य दो प्रकार की भक्ति

भक्ति के अन्य दो प्रकार भी बतलाए जाते है– (1) साधनारूपा भक्ति, और (2) प्रेमलक्षणा भक्ति। पूरे सोच विचार और जिज्ञासा पूर्वक की हुई साधनरूपा भक्ति ज्ञान का प्रकाश कर देती हैं। प्रेमलक्षणा भक्ति ज्ञान की नदी से पार ले जाकर प्रभु के घने वन में प्रवेश करा देती है। प्रेमलक्षणा भक्तिवाले भक्त मुक्ति नहीं चाहते, स्वर्ग भी नहीं चाहते। वे चाहते हैं वह विरह–अग्नि, जिसमें वे गीली लकड़ी की तरह जलते रहें। उनको इसी में स्वाद आता है। ऐसे ही प्रेमी भक्त के संबंध में फारसी भाषा में कहा है:

आहे सर्दो रंग ज़र्दो चश्मेतर,
इन्तज़ारो बेक़रारी बेसबर।
कम गुफ़्तनो कम खुर्दनो ख्बाबे हराम,
आशिकारा नौ निशाँ बाशद पिसर।।

'ठण्डी आहें, पीला रंग, जलपूर्ण नेत्र, प्रतीक्षा बेचैनी, असंतोष, मितभाषिता, मिताहार और अनिद्रा–बेटा! प्रेमियों के ये नौ चिन्ह्न हैं।'

इस अवस्था वाले भक्त न संशय करते हैं, न शंका, न शिकायत; वे इसी अवस्था में मस्त रहते हैं। बुल्लेशा के शब्दों में कहते हैं:

बुल्ला आशिक हो यँ रब दा, मुलामत होवे लाख।
लोग 'क़फ़र' आखदे तू 'आहो–आहो' आख।।
प्रेम भक्ति का नाश

जब प्रेम की, विरह की, प्रतीक्षा की अति हो जाती है और प्रेम भक्ति का रंग पूरा चढ़ने लगता है तब वह कितने प्यारभरे शब्दों में पुकारता है:

जो किसी के भी नहीं बाँधे,
प्रेम–बन्धन से गए वे ही कसे।
तीनो लोकों में नहीं जो बस सकें,
प्यार वाली आँख में वे ही बसे।।

इसी प्रकार इस प्रेम–भक्ति का नशा अधिक चढ़ जाता है तो उसे बाहर देखने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। कबीर के शब्दों में भक्त घोषणा करता है:

तेरा साजन है घट माहीं, बाहिर नैना क्यों खोले?
कहैं कबीर सुनो भाई साधो! साजन मिल गए तिल ओले।।

तब वह भक्त आँख खोलना भी आवश्यक नहीं समझता। अपने ही अन्दर, अपने ही दिव्य नेत्रों की कोठरी में, प्रियतम या साजन को बिठला वह उसकी पूजा करता है:

तुझे देखें तो फिर औरों को किन आँखों से हम देखें?
ये आँखें फूट जाएँ, गर्चे इन आँखों से हम देखें।।

प्रेममग्न, प्रभु की प्यारी मीरा ने क्या सुन्दर तथ्य कहा है:

और का पिया परदेश बसत है, लिख–लिख भेजे पाती।
मेरा पिया मेरे हृदय बसत है, गूँज करूँ दिन–राती।।
ज्ञानी भक्त

यह भक्ति का एक रूप है। दूसरी रूप वह है, जिसमें भक्त ज्ञानवान् होकर भक्ति में तत्पर होता है, और वह यह समझता है कि इस भक्ति में प्रवृत्त होने का मेरा एक लक्ष्य है। उस लक्ष्य को पूरा करने के लिए वह भगवान् की भक्ति में संलग्न होता है। ऐसे भक्त को यह शिक्षा मिल चुकी है। कि मानव–जीवन पाने का प्रयोजन यह है:

तस्मै त्वा युनक्ति कर्मणे वां वेषाय वाम्।।
यजु.।।

'भक्ति करने, शुभ कर्म करने और ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही यह जन्म लिया है।' परन्तु भक्ति उस समय तक नहीं हो सकती जब तक कर्म ठीक न हों। दिन–भर तो दुष्कर्म करते रहें और शाम को प्रभु–भक्ति में बैठ जाएँ तो भक्ति हो ही नहीं सकेगी। जब तक यह ज्ञान नहीं कि शुभ–कर्म कौन सा है और अशुभ कौन सा, तब तक शुभ कर्म करने की सामर्थ्य ही नहीं आ सकेगी। इसी का नाम है ज्ञान, कर्म और उपासना। पहले प्रत्येक पदार्थ का ज्ञान प्राप्त हो, फिर उस ज्ञान को क्रिया में लाया जाए। यह ज्ञान केवल पुस्तकालय की अलमारियों में या सिद्धान्तों के सन्दूक ही में बन्द पड़ा न रहे, अपितु मेरे जीवन के एक–एक कर्म में वह ज्ञान चमक उठे। कर्म जब पापपरहित हो जाएँगे तो फिर प्रेम–भक्ति पूर्णरूप से उदय हो जाएगी; भक्त की हृदय तन्त्री बज उठेगी। श्री भवदेव जी के शब्दों में यह ध्वनि गूँजने लगेगी:

प्रभो! यही ले साध चला मैं साधन–पथ पर।
रटा करूँ तव नाम नित्य निष्काम निरन्तर।।
भोगों से मुख मोड़, छोड़ मद–मत्सर सारे।
छोड़ जगत् का मोह, टोह में लगूँ तुम्हारे।।
संत–शरण कर ग्रहण मैं, तव गुण–गरिमा गा सकूँ।
कृपा–सिन्धु में डूबकर, त्याग–रत्न मैं पा सकूँ।।1।।
यह अन्तिम है साध, प्रेम–पारस मैं पाऊँ।
बना हृदय को स्वर्ग, विरह में उसे तपाऊँ।।
उर मेरा बन जाय सुखद स्वर्णिम सिंहासन।
दया–दान–दम आदि रहें, पूजन के साधन।।
मानस–मन्दिर में तुम्हें, मैं इस बार बुला सकूँ।
अश्रुहार उपहार दे, सर्वस्व भुला सकूँ।।2

शेष अगले अंक में....

क्या पुनर्जन्म सत्य है?

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

आर्य जगत् के दि. 1.2.14 के पत्र में महात्मा चैतन्य मुनि का शीर्षक लेख, ''संस्कारों का साक्षात्कार एवं पुनर्जन्म'' को देखा, विचार तो अच्छा है, पर क्या पुनर्जन्म होता है? वर्तमान विज्ञान सत्य की कसौटी पर उसे ही स्वीकार करता है,जो देखा जा सके जिसे स्पर्श किया जा सके, जिसकी क्रिया–प्रतिक्रिया हमें बोध हो।

परन्तु बहुत सी ऐसी चीजें हैं जो दिखती नहीं हैं, जैसे मनोभावना, स्मृति–विचार ये दिखते नहीं हैं–पर सुख–दुःख का अनुभव उसी के द्वारा आत्मा को होता है। आत्मा क्या है? यह एक अमिश्रित अतिसूक्ष्म द्रव्य है। वह इतना सूक्ष्म है कि उसका परिवर्तन नहीं होता, वह एटम से करोड़ों गुणा सूक्ष्म एवं उससे करोड़ों गुणा शक्तिशाली है। उसके गुण का वर्णन करते हुए प्रश्नोपनिषद के ऋषि कहते हैं कि यह आत्मा शरीर के सम्बन्ध से ''एष हि द्रष्टा स्पृष्टा श्रोता ध्राता रसयिता मन्ता बोद्धा कर्त्ता विज्ञानात्मा पुरूषः।

अर्थ–निश्चय यह देखने वाला, स्पर्श करने वाला, सुनने वाला, सूघने वाला, चखने वाला, मनन करने वाला, जानने वाला, कर्म करने वाला, ज्ञान करने वाला जीवात्मा है। आज उसकी बुद्धि ने संसार को चकित कर दिया है।

वह सत्य चित् चैतन्य गुणों से युक्त है, वह शुद्ध और स्वच्छ है। पर जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों से आच्छादित होने से वह विभिन्न रंगों जैसे रंगीन स्वभाव वाला दिखता है। इस शरीर को आत्मा के साथ जो प्राण मिला है, उसी शक्ति से उसका श्वास–प्रश्वास चल रहा है और उसी से सारे शरीर में रक्त का संचार तथा अन्य सब उपकरण कार्य कर रहे हैं। जठराग्नि भी उन्हीं क्रियाओं से उत्पन्न हो रही है।

प्रश्न–मृत्यु के पश्चात और जन्म के पहले क्या आत्मतत्त्व का अस्तित्व रहता है? उत्तर–हमारे विचार से जिस आत्मा के सूक्ष्म शरीर द्वारा इस स्थूल शरीर का निर्माण हुआ है और वह जिन दो तत्त्वों प्राण और आत्मा के सहारे जीवित रहता है, वह शरीर के अतिक्षीण होने अथवा अन्य कोई दुर्घटना से जब नष्ट हो जाता है तब आत्मा के साथ प्राण भी उससे अलग हो जाता है किन्तु आत्मा में विद्यमान उसके गुणों एवं कर्मानुसार उस पर पड़े संस्कारों का नाश नहीं होता। जिस प्रकार किसी पदार्थ के नष्ट हो जाने से उसके परमाणु कण के गुणों का नाश नहीं होता वैसे ही उसे भी समझना है।

जैसे रानी मधुमक्खी का छत्ता नष्ट हो जाने से, वह पुनः रानी मक्खी और मक्खी रूपी प्राणों के साथ रज–वीर्य के मिलन से अण्डेदानी में प्रवेशकर गर्भ में स्थूल शरीर को बनाने वाले उपादानों के रस–रक्तादि से मधुछत्ता रुपी शरीर का निर्माण करने लगते हैं। वैसे ही पुनः पुनः शरीर के नष्ट हो जाने से पुनः पुनः दूसरे शरीर के निर्माण के लिए भ्रूण में प्राण के साथ आत्मा का संयोग होता रहता है।

वेदादि शास्त्रों में पुनर्जन्म सिद्धान्त के प्रतिपादन के अनेक मंत्र हैं :–

'य ई चकार न सो अस्य वेद य ई ददर्शहिरुगिन्नुतस्मात्।
स मातुर्योना परिवीतो अन्तर्बहुप्रजा निर्ऋतिमा विवेश।।

(ऋ. 1, 164, 32)

जीवों के पूर्वजन्मों का आरम्भ और बाद के जन्मों का अन्त नहीं है। जब वे शरीर त्यागते हैं, तब अन्तरिक्ष में स्थित होकर, गर्भ में प्रवेश करके और जन्म लेकर पृथ्वी पर चेष्टा युक्त होते हैं।

वैदिक धर्म के अनुसार जीवात्मा शाश्वत अर्थात् नित्य है और उसके कर्म भी प्रवाह से नित्य है। पूर्व जन्म के कर्म जाति, आयु और भोग की प्राप्ति के कारण है। योगिराज श्रीकृष्ण कहते हैं–'न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्' (गीता–3,5)

बिना कर्म किए कोई मनुष्य एक क्षण भी नहीं रह सकता है और बिना भोगे उन कर्मो का क्षय नहीं होता है।'' कर्मों का फल दो प्रकार का होता है–एक सूक्ष्म और दूसरा स्थूल। उसका स्थूल फल पारश्रमिक मजदूरी तो मिल जाता है, पर जिस भली या बुरी नीयत से जो कर्म किया जाता है, उसका संस्कार उसके आत्मा पर पड़ता रहता है। उसका भी फल सुख–दुःख के रूप में मिलता रहता है और जो शेष रह जाता है वह दूसरे जन्म में अवश्य मिलता है। संस्कार के अनुसार ही स्वभाव बनता है। जिसका जैसा स्वभाव होता है वैसा ही उसकी बुद्धि का विकास शिक्षा से प्राप्त होता है और वह अपने विचार के अनुसार ही परिस्थिति को देखकर कर्मों को करता रहता है।

योनियाँ तीन प्रकार की मानी गईं हैं–(1) भोग योनी जैसे पशु–पक्षी। (2) उभय योनी, अर्थात् भोगयोनी और कर्मयोनी का मिश्रण जैसे मनुष्य। (3) कर्मयोनी, यह कर्मयोनी उनमुक्त पुरुषों की है जो मुक्ति से लौटते हैं। परन्तु उनको कर्म करना उन जीवों के लिए है जो जगत् में जन्म–मरण के बन्धन में पड़े हुए हैं।

हमारे विचार से मुक्ति से लौटने का जिन–जिन मुक्तात्माओं की अवधि समाप्त हो जाती है, उनकी आत्मा का तुरीय शरीर से छूटकर कारण और सूक्ष्म शरीर के साथ स्थूल शरीर को गर्भ में आकर धारण कर लेते हैं। वे बचपन से ही प्रतिभावान होते हैं। उनका संस्कार अन्य जीवों जैसा नहीं होता, वे तीव्रबुद्धि वाले होते हैं। उनका धर्म–ध्यान ईश्वर साधना की ओर होता है, वे सुधारक होते हैं। ऐसे महापुरुषों का जन्म सृष्टि के आदि में और उसके बाद भी होता है। क्योंकि जिनके पूर्वजन्म की समाधि सिद्धि में त्रुटि रह जाती है, वे पुनः पुनः जन्म लेकर अपने को मुक्ति योग्य बनाने का प्रयत्न करते रहते हैं।

संस्कार के बंधन से आच्छादित आत्मा का जैसा स्वाभाविक नियम है शरीर में संयोग से जीवन पैदा करना वैसे ही शरीर से उसके वियोग के हो जाने से मृत्यु हो जाना। अतः आत्मा का नियम ही है एक शरीर को छोड़ दूसरे शरीर को धारण करना। परन्तु जब साधना (अष्टांगयोग) से यह आत्मा संसार के संस्कार से रहित हो जाता है तब वह अन्तिम अवस्था में दिव्य ज्योति प्रणव को प्राप्त कर लेता है और तब उसका बार–बार जन्म नहीं होता वह अपने संकल्प के अनुसार परमात्मा के स्वः अर्थात मुक्ति के आनन्द में (स्वशक्ति अतीन्द्रिय द्वारा) मग्न रहता है।

संस्कार के बंधन से आच्छादित आत्मा का जैसा स्वाभाविक नियम है शरीर में संयोग से जीवन पैदा करना वैसे ही शरीर से उसके वियोग के हो जाने से मृत्यु हो जाना। अतः आत्मा का नियम ही है एक शरीर को छोड़ दूसरे शरीर को धारण करना। परन्तु जब साधना (अष्टांगयोग) से यह आत्मा संसार के संस्कार से रहित हो जाता है तब वह अन्तिम अवस्था में दिव्य ज्योति प्रणव को प्राप्त कर लेता है और तब उसका बार–बार जन्म नहीं होता वह अपने संकल्प के अनुसार परमात्मा के स्वः अर्थात मुक्ति के आनन्द में (स्वशक्ति अतीन्द्रिय द्वारा) मग्न रहता है।

मुक्ति में संकल्प मात्र शरीर होता है, यदि साधना में एक भी त्रुटि न हुई तो वह जीवन जीव मुक्ति का ही काम देगा और देह त्याग के पश्चात फिर मुक्त अवस्था आरम्भ हो जाएगी। यदि त्रुटि हो गई तो कर्म का बन्धन फिर आरम्भ हो जायेगा और आगे चलकर जीवों के समान उनकी भी यही दशा रहेगी। वह विकास की जिस सीढ़ी पर होंगे उसी के अनुसार कार्य होगा।

''ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि ''मोक्ष में भौतिक शरीर व इन्द्रियों के गोलक जीवात्मा के साथ नहीं रहते किन्तु उनके अपने स्वाभाविक शुद्ध गुण ही रहते हैं।'' और वे अतीन्द्रिय द्वारा अनेक प्रकार के दिव्य ज्योति के अलौकिक दृश्य को देखते तथा आनन्द का बोध करते रहते हैं।

ध्यान में मन और प्राण की एकाग्रता से प्रकाश को बिना चक्षु के देखना, स्मरण का होना, अन्तरध्वनि को बिना कान के सुनना और पूर्वजन्म का ज्ञान कतिपय बालकों में हो जाना यह सब अतीन्द्रिय द्वारा ही होता है। महात्मा चैतन्य मुनि लिखते हैं कि–'जीवात्मा जो भी शुभाशुभ कार्य करता है उसके संस्कार चित्त–पटल पर अंकित होते हैं। और यह चित्त सूक्ष्म शरीर का नाश नहीं होता। अनेक अबोध बालक जिनके संस्कार अच्छे होते हैं वे अपने पिछले जन्मों की बातें (सूक्ष्म शरीर में अंकित के दर्शन से) बता देते हैं और जैसे–जैसे इस जन्म के संस्कारों का आवरण पड़ता जाता है, वैसे–वैसे वे पूर्वजन्म की बातों को भूल जाते हैं।

जिस प्रकार मनुष्य को सुषुप्ति निद्रावस्था में कुछ भी ज्ञान नहीं रहता, किन्तु प्राणदेव की क्रिया अविरत चलती रहती है, इसी प्रकार मृत्यु के पश्चात मरने वाले को कुछ भी ज्ञान नहीं रहता, पर आत्मा के साथ सूक्ष्म शरीर का प्राण कार्य करता रहता है, जैसे मनुष्य सुषुप्ति अवस्था से स्वप्ना और जागृतावस्था में आने से जागृत हो जाता है वैसे ही आत्मा का सूक्ष्म शरीर के प्राण से ही रज–वीर्य का सम्बन्ध भ्रूण में पैदा हो जाता है और तब उस प्राण से ही, प्रश्नोपनिषद के ऋषि ने कहा है ''गर्भ में गर्भ की स्थापना का कारण प्राण है यदि रज और वीर्य के साथ प्राण न मिले तो गर्भ की स्थापना नहीं हो सकती। प्राण के ही कारण गर्भ की वृद्धि होती है और प्राण के ही आश्रय से बालक की उत्पत्ति होती है।'' जिस प्राण से श्वास–प्रश्वास की क्रिया होती है, उसी सूक्ष्म शरीर के सूक्ष्म प्राण में गर्भ से शिशु का पालन पोषण होता रहता है और जन्म लेने पर स्थूल प्राण से उसका सम्बन्ध हो जाता है। अतः पुनर्जन्म अवश्य होता है।

मु. पो.–मुरारई, जिला–वीरभूम (प. बंगाल), 731219

इन्द्रिय–निग्रह का महत्व

● **महात्मा चैतन्यमुनि**

मनु महाराज ने धर्म के जो दस लक्षण बताए हैं उनमें छठा लक्षण 'इन्द्रिय निग्रह' बताया है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस सम्बन्ध में लिखते हैं– 'जो दुष्टाचारी अजितेन्द्रिय पुरुष है उसके वेद, त्याग, यज्ञ, नियम और तप तथा अन्य अच्छे काम कभी सिद्धि को प्राप्त नहीं होते। '(संस्कार विधि) ' जो अजितेन्द्रिय पुरुष है उसको विप्र दुष्ट कहते हैं। उसके करने से न वेद ज्ञान, न त्याग, न यज्ञ, न नियम और न अधर्माचरण सिद्धि को प्राप्त होते हैं। किन्तु ये सब जितेन्द्रिय धार्मिक जन को सिद्ध होते हैं। (स.प्र.) मनु जी कहते हैं–

इन्द्रियाणां प्रसंगेन दोषमृच्छत्यसंशयम्।
संनियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति।।
(मनु. 2–68)

अर्थात् जीवात्मा इन्द्रियों के साथ मन लगाने से निःसन्देह दोषी हो जाता है और उपरोक्त दस इन्द्रियों को वश में करके ही सिद्धि को प्राप्त होता है। यहां पर इस बात को स्पष्ट किया गया है कि इन्द्रियों को विषयों की ओर ले जाने वाला वास्तव में मन ही है। महिर्ष दयानन्द सरस्वती जी ऐसी स्थिति का विवेचन करते हुए सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं– 'जीवात्मा इन्द्रियों के वश होके निश्चित बड़े–बड़े दोषों को प्राप्त होता है..... जो इन्द्रिय के वश होकर विषयी, धर्म को छोड़कर अधर्म करने हारे विद्वान हैं, वे मनुष्यों में नीचजन्म बुरे–बुरे दुःखरूप जन्म पाते हैं।..... इन्द्रियों को विषयासक्ति और अधर्म में चलाने से मनुष्य निश्चित दोष को प्राप्त होता है और जब इनको जीतकर धर्म में चलाता है तभी अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त होता है।' इसी संबन्ध में आगे वे मनु जी को उद्धृत करते हुए कहते हैं–

'इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान्यन्तेव वाजिनाम्
(मनु. 2–63)

जैसे विद्वान्–सारथि घोड़ों को नियम में रखता है वैसे मन और आत्मा को खोटे कामों में खींचने वाले विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के निग्रह में प्रयत्न सब प्रकार से करें।..... मनुष्य का यही मुख्य आचार है कि जो इन्द्रियाँ चित्त को हरण करने वाले विषयों में प्रवृत्त कराती हैं उनको रोकने में प्रयत्न करें, जैसे घोड़े को सारथि रोककर शुद्ध मार्ग में चलाता है, इस प्रकार इनको अपने वश में करके अधर्म मार्ग से हटाकर धर्ममार्ग में सदा चलाया करें..... जैसे सारथि घोड़े को कुपथ में नहीं जाने देता वैसे विद्वान् ब्रह्मचारी आकर्षण करने वाले विषयों में जाते हुए इन्द्रियों को रोकने में सदा प्रयत्न किया करें।' मनु जी मन तथा इन्द्रियों को वश में करने के लिए उपाय बताते हुए कहते हैं–

वशे कृत्वेन्द्रियग्रामं, संयम्य च मनस्तथा।
सर्वान् संसाधयेदर्थानक्षिण्वन् योगतस्तनुम्।।
(मनु. 2–100)

मनुष्य इन्द्रियों के समूह को वश में करके और मन को नियंन्त्रित करके योगाभ्यास के द्वारा शरीर को क्षीण न करते हुए अपने सब प्रयोजनों को सिद्ध करे। जितेन्द्रियता के अभाव में व्यक्ति का पतन हो जाता है इस समबन्ध में महाभारतकार का कहना है– 'इन्द्रियों का स्वामी न बनने से अर्थात् इन्द्रियों पर नियंत्रण न रखने से महात्मा जन भी अपने ही कर्मों से तथा राजा लोग राजकीय भोग विलासों से बन्धनों में फंसते हुए देखे गए हैं। जो व्यक्ति स्वभावतः अपनी ओर आत्मा को खींचने वाली पांच इन्द्रियों के द्वारा जीत लिया जाता है, उसकी मुसीबतें उसी प्रकार बढ़ती हैं जैसे शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है।' जिस व्यक्ति का अपनी इन्द्रियों पर संयम नहीं है वह व्यक्ति कभी न कभी किसी न किसी प्रकार से पतन को प्राप्त हो ही जाता है। हमारे सामने कितने ही ऐसे उदाहरण हैं जो इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि किसी एक एषणा के वशीभूत होकर बड़े से बड़ा व्यक्ति भी पतन की गहरी खाइयों में उतरता चला जाता है..... जीवन के महान् लक्ष्य से भटक जाता है। इसलिए चरकसंहिता सुत्र स्थानम् (30–15) में बहुत ही सार्थक बात कही गई है– **इन्द्रियजयो नन्दनानामुत्कृष्टतमम्**। अर्थात् आनन्दित करने वाले उपायों में, इन्द्रियों पर विजय सर्वोत्तम उपाय है। इसके अतिरिक्त और कोई भी उपाय सार्थक नहीं है। किसी ने बहुत ही सुन्दर और सार्थक बात कही है–'इन्द्रियों को वश में न रखना आपत्तियों में गिरने का मार्ग है और इन्द्रियों को जीत लेना सम्पत्तियों को पाने का मार्ग है....आपको जो इष्ट हो उस मार्ग पर जाइए....' इसलिए वेद में इन्द्रियों की पावनता के लिए प्रार्थना की गई है–

यन्म छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं
बृहस्पतिर्मे ददधातु।
शन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।।
(यजु. 36–2)

अर्थात् वह वेद वाणी का स्वामी परमात्मा मुझ पर कृपा करके मेरी आँख के हृदय के और मन के छिद्रों को अर्थात दोषों को दूर करके मुझे शान्तियुक्त कर दे। संसार में प्रत्येक व्यक्ति सुख और शान्ति चाहता है मगर वह सुख और शांति उसे तब तक कदाापि नहीं मिल सकती है जब तक वह अपनी इन्द्रियों के छिद्रों अर्थात् दोषों को दूर नहीं करेगा। इसलिए प्रभु से प्रार्थना की गई है कि वह कृपा करके हमारे दोषों को दूर कर दें। हमारे अपने ही दोष हम से पाप कर्म कराते हैं और उन पापों का फल हमें अशान्ति और दुःख के रूप में भोगना पड़ता है। हम इस भवसागर रूपी प्रवाह में फँसे हुए है तथा यह शरीर हमें एक नौका के समान मिला हुआ है। यह भवसागर से पार उतरने का एक माध्यम है..... ....साधन है। यदि हम इसका सदुपयोग करेंगे तो निश्चित रूप से भवसागर से पार हो जाएंगें और इसके विपरीत यदि हम इसका सदपयोग करेगें तो निश्चित रूप से भवसागर से पार हो जाएँगें और इसके विपरीत यदि हम इसके विपरीत इसका दुरूपयोग करेंगे तो एक नहीं न जाने कितने ही जन्म हमें इसी भवसागर में गोते खा–खा कर दुःख भोगने होंगे। मानव योनि तो पार उतरने का एक स्वर्ण अवसर है इसलिए इसे कदापि खोना नहीं चहिए। अब विचारणीय है कि यह शरीर एक नौका तो है..... एक साधन तो है मगर यदि इस नौका में छिद्र होगें तब तो पार उतरना एकदम असंभव हो जाएगा। अधिक छेदों की तो बात ही छोड़े, यदि छेद अनेको हों तब तो एक क्षण भर में ही डूब जाए। इसलिए इस नौका को छिद्ररहित करने की बात मंत्र में कही गई है।

इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अपना आत्मनिरीक्षण करके दोषों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। यन्मे छिद्रं चक्षुषो..... अर्थात् हमारी आँख आदि इन्द्रियों में जो जो दोष हैं, वे दूर हों हमारी समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ दोषरहित होनी चाहिए। जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि केवल एक त्रुटि से भी व्यक्ति का सर्वनाश हो सकता है और जिस व्यक्ति में ज्ञानेन्द्रियों के समस्त दोष हों उसके बचने की कोई आशा ही नहीं है।

इन्द्रियाणान्तु सर्वेषां यद्येकं चरतीन्द्रियम्।
तेनास्य क्षरति प्रज्ञादृतेः पात्रादिवोदकम्।।
(मनु. 2–99)

अर्थात् सब इन्द्रियो में से एक इन्द्रिय भी विषयासक्त होकर राह से भटक जाए तो व्यक्ति का सब विवेक इस प्रकार नष्ट हो जाता है फूटे घड़े पानी बह जाता है। किसी संस्कृत के कवि ने बड़ा सुन्दर कहा है–

कुरंग मातंग पंतग भृंग मीना हता पञ्चभिरेव पञ्च।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यात्, यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च।।

अर्थात् हिरण 'शब्द' विषय में फँसकर अपने प्राण गँवा देता है। हाथी 'स्पर्श' विषय का दास बनकर बन्धन को प्राप्त होता है। पंतगा 'रूप' विषय पर मोहित होकर जल मरता है। भँवरा 'गन्ध' विषय में मस्त होकर मृत्यु को प्राप्ता होता है। मछली 'रस' के वशीभूत होकर काँटे में फँस जाती है। फिर भला इन पाँचों विषयों को स्वछन्द होकर भोगने वाले इस मानव का अमूल्य जीवन नष्ट होने से कैसे बच सकता है? अर्थात् बचने की कोई संभावना नहीं। कहते है कि जब किसी शिकारी ने हिरण को मारना होता है तो वह किसी वाद्य के मधुर मधुर शब्द वातावरण में बिखेरता है। शब्द का व्यसनी होने के कारण वह हिरण एकदम शिकारी के सामने आ जाता है और वह शिकारी उसके प्राण हर लेता है। किसी हाथी को पकड़ना होता जमीन में एक बहुत बड़ा खढ्ढा खोदा जाता है उस गढ्ढे को हल्के फुल्के तख्तों और घास फूस आदि से ढक दिया जाता है। फिर कहीं से हथिनी का चमड़ा लाकर उन तख्तों और घास फूस से ऐसे लटका दिया जाता है मानो कोई हथिनी ही खड़ी हो। कामासक्त हाथी उस तथाकथित हथिनी से अपनी कामपूर्ति करने हेतु दौड़ता हुआ उन तख्तों पर आ जाता है। उसके भार से वे नाजुक तख्ते एकदम टूट जाते हैं और हाथी गढ्ढे में फँस जाता है। पतंगा रूप विषय में आसक्त होकर रोशनी से टकरा–टकरा कर ही अपने प्राण दे बैठता है। भँवरा गन्ध में मस्त होकर अपने प्राण दे बैठता है। वह फूल की गन्ध में मस्त रहता है तथा फूल की पंखुड़ियां अचानक बन्द हो जाती हैं और वह उन्हीं में फँसकर अपने प्राण दे देता है। मछली जिह्वा के स्वाद हेतु जा मरती है। मछली को पकड़ने के लिए एक विशेष प्रकार के तेज काँटे के आगे खाद्य पदार्थ लगाकर उस काँटे को रस्सी के सहारे जल में फैंक दिया जाता है और मछली खाने के लिए ज्यों ही आगे बढ़ती है, उस काँटे में फँस जाती है। इसलिए संस्कृत के कवि ने कहा है कि इस प्रकार एक–एक विषय के कारण ये सभी अपने–अपने प्राण गँवा बैठते है और जो व्यक्ति आँख, कान, जिह्वा त्वचा और नाक आदि समस्त ज्ञानेन्द्रियों के भोगों की कामना में डूबा हुआ हो उसके बचने की तो आशा ही कैसे की जा सकती है? भर्तृहरि जी ने अपने वैराग्य शतक में एक स्थान पर लिखा है।

आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णातरंगाकुला।
रागग्राहवती वितर्कविहगा धैर्यद्रुमध्वंसिनी।।
तस्याः पारगता विशुद्धमनसो नन्दन्ति
योगीश्वराः।। (वै.श. 40)

अर्थात् संसार में एक आशा नाम की नदी है। यह नदी मनोरथ इच्छारूपी जल से भीगी हुई है। इसमें तृष्णा लोभ रूपी तरंगें उठ रहीं हैं। यह राग द्वैष रूपी मगरमच्छों से परिपूर्ण तथा तर्क वितर्क रूपी जल पक्षी इसमें तैर रहें है। धैर्यरूपी वृक्षों को उखाड़ने वाली इस नदी में अज्ञानरूपी भँवर उठ रहे है। इस नदी के दोनों किनारों पर ऊँचे–ऊँचे चिन्ता रूपी तट

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

कहानी से उपजी कहानी

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

गांव के अनेक बूढ़े, युवा और बच्चे गुनगुनी धूप में, खुले मैदान में बतिया रहे थे, खेल रहे थे और धमा चौकड़ी मचा रहे थे। अचानक तीव्र गति से दौड़ती हुई एक लम्बी, चौड़ी, चमचमाती कार मैदान में आकर रुक गई। कार की नम्बर प्लेट के ऊपर अंग्रेजी में लिखा था, 'सिविल जज।' अतः यह तो स्पष्ट ही था कि कार किसी न्यायाधीश की होगी। भयभीत, सहमे हुए से ग्रामवासी कार के निकट सिमटने लगे। सबको किसी मुसीबत की आशंका हुई। कार की पिछली सीट पर बैठा पुलिसकर्मी नीचे उतरा और उसने ग्रामवासियों से प्रश्न किया, ''क्या इस गाँव में पंडित नरदेव जी रहते हैं?''

अनेक ग्रामवासियों ने लगभग एक साथ उत्तर दिया, ''हाँ, हाँ रहते हैं,'' यहीं नजदीक ही।

पुलिसकर्मी ने फिर प्रश्न किया, ''क्या उम्र होगी उनकी ?'' ''लगभग नब्बे वर्ष।'' भीड़ में एक स्वर उभरा। ''जज साहब उनसे मिलना चाहते हैं। ''पुलिसकर्मी ने धीरे से कहा। एक युवक दौड़ता हुआ पंडित नरदेव की जीर्ण–शीर्ण कुटिया में पहुँच गया और हाँफते हुए बोला ''पंडित जी, जज साहब आए हैं, पुलिस भी साथ है। आपको खोज रहे हैं। हो सकता है आपको गिरफ्तार कर लें। आप जल्दी से कहीं छिप जाइए। मैं बोल दूँगाा, नहीं हैं झोपड़ी में।''

सुनते ही पंडित जी घबरा गए। मैंने तो कोई अपराध नहीं किया। वर्षों से यहीं हूँ। पर उन्हें मेरे नाम का पता कैसे चला। स्वतंत्रता संग्राम में जरूर भाग लिया था। लेकिन अब तो देश आजाद है। अपनी सरकार है। मैं नही छिपूँगा। मैं सच्चा आर्य हूँ। मेरी रगों में आर्य समाज के संस्कार लहू बनकर बह रहा हैं। मैंने भागना या छिपना नहीं सीखा।''

''पंडित जी, अगर भागना या छिपना नहीं है तो ढंग के कपड़े तो पहन लीजिए। बाहर दो–चार कुर्सियाँ तो लगा दीजिए। वे पहुँचने ही वाले हैं।''

उधर जज साहब ने कार मैदान में ही छोड़ दी और पैदल ही भीड़ के साथ आगे बढ़ने लगे। सहमी–सहमी, डरी–डरी सी भीड़। पता नहीं क्या होगा ? कहीं पंडित जी गिरफ्तार न कर लिए जाएँ। पर उन्होंने कोई अपराध भी तो नहीं किया है। वे तो गाँव के मसीहा है। ऐसा सच्चा आर्य खोजने से भी नहीं मिलेगा।

एक बुजुर्ग व्यक्ति ने हिम्मत करके अपने होंठ हिला ही दिए, ''साहब, हम अनपढ़ जरूर हैं, पर पंडित जी को अच्छी तरह पहचानते हैं। जिनका अपराधी भी आदर करते हों, वह क्या अपराध करेगा ?''

''वे तो कट्टर आर्य समाजी हैं और आर्य समाजी कभी झूठ नहीं बोलता। उन्होंने गाँव में आर्य समाज मंदिर की भी स्थापना की है। हम लोग वहाँ साप्ताहिक हवन करते हैं। बच्चों में नशे की आदत छूट रही है।'' एक अन्य बुजुर्ग ने स्वर मिलाया।

''उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भी भाग लिया है। यह तो आप जानते ही हैं कि स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाजियों का सर्वाधिक योगदान रहा है'', किसी ओर से आवाज आई।

''उनके पढ़ाए शिष्य बड़े–बड़े पदों पर कार्य कर रहे हैं। पंडित जी चाहते तो शहर में जाकर किसी भी शिष्य के साथ सुखमय जीवन व्यतीत कर सकते थे लेकिन वे तो अपनी मिट्टी से ही जुड़े रहे। इन्होंने सुख छोड़ दिए पर गाँव नहीं छोड़ा। वे हमारे गाँव के देवता हैं। यदि उन्हें गिरफ्तार किया गया तो.....''

''हम भूख हड़ताल कर देंगे'' एक साथ कई स्वर उभरे।

इतना सब सुनने पर भी जज साहब कुछ नहीं बोले। वे भीड़ के साथ पंडित जी की कुटिया में पहुँच गए। पुलिस कर्मी ने भीड़ को एक तरफ किया और जज साहब पंडित जी को ओर बढ़ने लगे। भीड़ साँस रोके होनी–अनहोनी की प्रतीक्षा करने लगी। पंडित जी भी चट्टान की तरह खड़े होकर अतिथि के सम्मान में हाथ जोड़कर खड़े हो गए। जज साहब आगे बढ़े और पंडित जी के चरणस्पर्श करके खड़े हो गए। भीड़ के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अब सब को तो यह विश्वास हो ही गया कि पंडित जी को गिरफ्तार नहीं किया जाएगा।

पंडित जी को भी कम आश्चर्य नहीं हुआ। कहीं जज साहब को गलतफहमी तो नहीं हो गई। हो सकता है मुझे अपना बुजुर्ग निकटतम सम्बन्धी समझ रहे हों। आखिर पंडित जी को बोलना ही पड़ा, ''साहब, मैं तो एक साधारण आदमी हूँ। मेरे चरणस्पर्श करके आप मुझे क्यों लज्जित कर रहे हैं ?''

''पंडित जी, क्या आप जानना नहीं चाहेंगे कि मैं यहाँ पर क्यों आया हूँ ?'' जज साहब के पहली बार होंठ हिले।

''साहब, मैं यह पूछने की या जानने की हिम्मत कैसे कर सकता हूँ। मुझे तो महाभारत की वह कहानी याद आ रही है जब भगवान् कृष्ण ने गरीब सुदामा के चरण छुए थे।'' पंडित जी सहमते हुए बोले।

''तो यों समझ लीजिए कि मैं भी आपको एक कहानी सुनाने आया हूँ। क्या सुनेंगे आप ?'' पंडित जी भी हाथ जोड़कर न तो 'हाँ' कह सके न 'न'। ग्रामवासी भी इस नाटकीय दृश्य के अन्तिम पटाक्षेप को देखने के उत्सुक थे। तब जज साहब एक कुर्सी पर बैठ गए और उन्होंने कहा कि यह कहानी मुझे मेरे पिता जी ने सुनाई थी। कहानी इस प्रकार है –

''एक गाँव में एक धर्मशील युवा पंडित जी रहते थे। वे अन्य कार्यों के साथ गाँव के स्कूल में पढ़ाने का कार्य करते थे। वे प्रायः अतिरिक्त समय में बच्चों को निःशुल्क पढ़ाया करते थे। चारों तरफ उनकी प्रतिष्ठा और मान सम्मान था। उसी ग्राम में एक गरीब किसान था। वह अत्यन्त निर्धन था। उसके बेटे का नाम था माधव। किसान निर्धन होने के कारण बच्चे को पढ़ा–लिखा नहीं सका। एक दिन वह अपने बेटे माधव को पंडित जी के चरणों मे रख कर बोला कि ''पंडित जी, आज से यह आपका ही बेटा है। मैं बीमार रहता हूँ। पता नहीं, कब इस संसार से कूच कर जाऊँ। मैं इसको पढ़ा–लिखा भी नहीं सका, अगर यह पढ़–लिख गया तो आपका ही बेटा कहलाएगा।'' कुछ दिन बाद किसान की मृत्यु हो गई और पंडित जी ने माधव को पढ़ा–लिखा कर, उच्च शिक्षा (एल.एल.बी) देकर उसे इतना होनहार और होशियार बना दिया कि वह एक शहर में प्रसिद्ध एडवोकेट (वकील) बन गया।

जब सरकारी नौकरी करते हुए एडवोकेट माधव को पहली तनख्वाह (वेतन) मिली तो वह अपने गाँव पहुँचा और उसने अपनी पहली तनख्वाह अपने गुरु जी (पंडित जी) के चरणों में रख दी। पंडित जी ने आशीर्वाद दिया, प्रसन्नता प्रकट की परन्तु भेंट (तनख्वाह) को लेने से इन्कार कर दिया। एडवोकेट माधव इस बात पर अड़ा रहा कि शिष्य वरतन्तु ने अपने गुरु कौत्स को समस्त राज्य देना चाहा परन्तु कौत्स ने उस की ओर देखा भी नहीं। यहाँ भी तो यही हो रहा था। जब पंडित जी ने अनुभव किया कि एडवोकेट माधव किसी भी रूप में मानने वाले नहीं हैं तो उन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने माधव से कहा, ''जब पेड़ फलदार हो जाता है, उससे फल तभी लिए जाते हैं। पति–पत्नी को हम पेड़ कह सकते हैं और उनकी संतान को फल जब तुम्हारा विवाह हो जाएगा और फल के रूप में तुम्हारी संतान उत्पन्न हो जाएगी। तब तुम्हारी संतान नौकरी लगने पर मुझे जो भी भेंट देगी, उसे मैं स्वीकार कर लूँगा। यही मेरी शर्त है।'' इतना कहकर पंडित जी चुप हो गए। उन्हें विश्वास था, यह शर्त पूर्ण हो ही नहीं पाएगी और मैं भेंट के रूप में रूपए लेने से बच जाऊँगा। बेचारे माधव जी को गुरु जी के शर्त के सम्मुख नतमस्तक होना पड़ा। वे अपने शहर चले गए। कुछ वर्ष बाद उनका विवाह हुआ। उनकी दो संतानें हुईं–एक बेटा और एक बेटी। बेटा पढ़–लिख कर जज और बेटी डॉक्टर बन गई। कुछ समय बाद किसी बीमारी से माधव जी की भी मृत्यु हो गई। ''इतना कह कर जज साहब चुप हो गए।

तब एक ग्रामवासी ने हिम्मत करके पूछा, ''साहब, आपने यह कहानी हमें क्यों सुनाई और क्या इसी कहानी को सुनाने इतनी दूर आए थे ?'' इस पर जज साहब ने कहा ''पहले आप यह बताइए इस कहानी में कौन–कौन पात्र थे ?''

तब एक नवयुवक सहमते हुए बोला, ''कहानी में मुख्य रूप से तीन पात्र थे, गुरुजी, उनके शिष्य एडवोकेट माधव तथा उनका पुत्र, जिसका आपने नाम ही नहीं बताया।''

जज साहब सुनकर सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा ''मैं बताऊँगा, एडवोकेट माधव के बेटे का नाम। उनके बेटे का नाम है – मोहन कुमार, और वह मैं ही हूँ। एडवोकेट माधव जी मेरे ही पिता जी थे।''

यह सुनकर सभी ग्रामवासी आश्चर्य चकित रह गए। ''पर आपने पंडित जी या अपने गुरु जी का नाम तो बताया ही नहीं। एक युवक ने साहस करके पूछ ही लिया।

''बताता हूँ भाई, मेरे दादा तुल्य गुरुजी का नाम है – पं. नरदेव जी, जो आपके सामने खड़े हैं। ''इतना कह कर जज साहब ने फिर पंडित जी के चरण स्पर्श किए। समस्त ग्राम वासियों ने ताली बजाकर अत्यधिक प्रसन्नता प्रकट की।

फिर जज साहब ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा कि ''मेरे पूज्य पिता माधव जी ने मुझे मरने से पूर्व कहा था कि ''बेटा, मैं गुरु ऋण से तभी उऋण हो पाऊँगा जब मेरे तीस वर्ष पूर्व लिए संकल्प को पूरा कर सकोगे।'' अब मुझे पूरा विश्वास है कि पूज्य पंडित जी मेरी भेंट को लेने से इंकार नहीं करेंगे। इससे मेरे पिता जी की आत्मा को परमशांति मिलेगी।

इतना कहकर जज साहब ने रूपयों की थैली, मिष्ठान्न, फलादि पंडित जी के चरणों में समर्पित कर दिए। ग्रामवासियों ने देखा कि पं. नरदेव जी ने नेत्रों से अविरल अश्रु धारा बह रही थी। शोक और हर्ष के बीच झूलते हुए उनसे कुछ कहते नहीं बन रहा था। उन्होंने जज साहब को गले से लगा लिया। वे सधे हुए कंठ से केवल इतना ही कह पाए, ''बेटा, तुम्हारे पिता जी शर्त जीत गए। उन्होंने एक आर्य के समान मर कर भी अपने वचन का पालन किया है।''

ग्रामवासियों ने पहली बार अनुभव किया कि जिस गाँव में दो–दो हीरे हों, वह गाँव निर्धन कैसे रह सकता है ?

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम,
ज्वालापुर (हरिद्वार)

राष्ट्र की रक्षा कौन करेगा ?

● देवराज आर्यमित्र, नई दिल्ली

मैं आर्यसमाज के वार्षिक उत्सवों में जाता रहता हूँ। वहाँ प्रायः राष्ट्ररक्षा सम्मेलन के कार्यक्रम होते रहते हैं। आमन्त्रित विद्वान वक्ता और नेता अपनी ओजस्वी भाषा में जली–कटी बातें सुनाकर चले जाते हैं। हम श्रोतागण सुनकर अपने घर आ जाते हैं। परन्तु कोई परिवर्तन नज़र नहीं आता; वही ढाक के तीन पात दिखाई देते हैं। आर्यसमाज के अधिकारी उत्सवों का समापन करके सुख की साँस लेते हैं। 'आर्यसमाज अमर रहे' वेद की ज्योति जलती रहे आदि, जयघोष लगाकर भीड़ का उत्साह टाँय–टाँय फिस होकर रह जाता है।

आर्यो, यदि राष्ट्र की रक्षा करना चाहते हो, कृण्वन्तो विश्वार्यम्' के स्वप्न को साकार करना चाहते हो तो पहले चरित्र का निर्माण करना होगा। अपना आचरण शुद्ध सात्विक बनाना होगा। जो कुछ हम कहें, उसे करके दिखाएँ। यह तब सम्भव होगा जब हम भौतिकवाद की चकाचौंध से निकलकर, मौजमस्ती की दुनिया को छोड़कर पं. लेखराम और पं. गुरुदत्त की तरह बनकर प्रचार कार्य करेंगे। यह काम अपने जीवन और परिवार से शुरू करके आगे बढ़ना होगा।

आज मैं देखता हूँ, आर्य–समाजी लचकदार बने हुए हैं। आर्यसमाज के नियमों–सिद्धांतों की उपेक्षा करके अपनी मनमर्जी करते हैं। जैसे मोटी बात है, अयोग्य आचरणहीन व्यक्ति को भारी चंदा देने के कारण आर्यसमाज का सदस्य बना लेते हैं। दो वर्ष बाद वही आदमी कार्यकारिणी में आकर अधिकारी बन जाता है। फिर अपने कारनामों से आर्य संस्था को धूमिल करता है। जब हम पूछते हैं कि सिद्धान्तों के विरूद्ध कार्य क्यों करते हो ? तब कहते हैं कोई बात नहीं, क्या फर्क पड़ता है आर्यसमाज की संख्या बढ़ानी चाहिए। इस प्रकार आर्यसमाज में कूड़ा कर्कट जमा हो रहा है। आज हमारे पास यानी आर्यसमाज के पास धन भी है, शक्ति है, भवन भी हैं, परन्तु चरित्र की कमी है। इसलिए पतन हो रहा है। प्रदर्शन खूब हो रहा है। सैकड़ों हवन कुण्डों में एक साथ यज्ञ हो रहा है। भजन उपदेश हो रहा है परन्तु प्रभाव कुछ नहीं हो रहा है। लंगर खाओ और मौज उड़ाओ। इसका एकमात्र कारण है कि त्याग भावना से काम नहीं हो रहा है। लोकैषणा, वित्तैषणा, पुत्रैषणा के वशीभूत होकर व्याकुल हो रहे हैं। हम सुनते हैं वो भी समय था जब आर्यसमाज को ऊँचा उठाने के लिए लोगों ने अपने घर उजाड़ दिए। आज क्या हो रहा है ? आज अपना घर बनाने के लिए आर्यसमाज को उजाड़ने में लगे हुये हो ? पद प्राप्त करने के लिए क्यों लड़ते हो? क्या बिना पद के सेवा प्रचार कार्य नहीं कर सकते? आर्यसमाज का प्रचार करने के लिए पद प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है। बताओ ! आर्यजगत् में आज कितने ऐसे उपदेशक हैं जिनको दक्षिणा का लोभ लालच नहीं है। मैं देखता हूँ, एक मामूली भजन गायक ऊट–पटाँग बातें सुनाकर मोटी दिहाड़ी बनाने के चक्कर में रहता है।

राष्ट्र रक्षा के लिए शिक्षा पद्धति को भी बदलना होगा। इंग्लिश मीडियम के पब्लिक स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे देशभक्त नहीं बन रहे हैं। यह तो विदेशों में जाकर धन कमाने के लिए तैयार किए जा रहे हैं। भारतीय संस्कृति की धज्जियाँ उड़ाकर पश्चिम की सभ्यता को अपना रहे हैं। आर्यसमाज में आनेवाले एक सज्जन के बच्चे से पूछा, क्या प्रातः अपने माता–पिता को नमस्ते करते हो ?, उत्तर मिला, हम गुडमार्निंग करते हैं। इनको हिन्दी की गिनती नहीं आती। लड़कियाँ मिस इण्डिया या मिस वर्ल्ड बनने जा रही हैं। उनके पहनावे को देखकर हमें शर्म आती है। आर्यसमाज के लोगो बताओ तुम्हारे घर में क्या हो रहा है ? कैसे होगी राष्ट्र की रक्षा ?

भारत की झूठी पंथनिर्पेक्षता

● कृष्णचन्द्र गर्ग

पंथनिर्पेक्षता (Secularism) का अर्थ है कि देश का कोई भी कानून किसी पंथ, सम्प्रदाय, मज़हब (religion) के आधार पर न हो। भारत को छोड़ सारा संसार इसी परिभाषा को मानता है और शब्दकोष में भी पंथनिर्पेक्षता का यही भाव है। बेशक हमारे संविधान की उद्देशिका (preamble) में भी देश को पंथनिर्पेक्ष बनाने की बात कही गई है, परन्तु संविधान के अन्दर बहुत सी ऐसी धाराएँ हैं जो उपरोक्त धारणा की धज्जियाँ उड़ाते हुए विभिन्न मजहबों के आधार पर बनाई गई हैं तथा व्यवहार में भी विभिन्न मजहबों के लिए अलग–अलग कानून तथा व्यवस्थाएँ अपनाई गई हैं।

हमारे संविधान के अनुच्छेद 25 में तलवार (एक हथियार) धारण करने और लेकर चलने का अधिकार केवल सिखों को दिया गया है। अनुच्छेद 30 में मजहब या भाषा पर आधारित अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि के शिक्षण संस्थानों की स्थापना और प्रशासन का अधिकार दिया गया है। विवाह, तलाक और उत्तराधिकार सम्बंधी कानून 'हिन्दू कोड बिल' केवल हिन्दुओं के लिए है। मुस्लिम पर्सनल लॉ मुसलमानों के लिए है। गुरुद्वारा एक्ट सिखों से संबन्धित है। तलाक की अवस्था में मुस्लिम महिला को गुजारा भत्ता दिलाने के लिए देश के न्यायालयों के दरवाजे बन्द कर दिए गए हैं और मुस्लिम महिला (तलाक में सुरक्षा) कानून 25/1986 बना दिया गया है। संविधान का अनुच्छेद 370 जम्मू–कश्मीर प्रान्त को शेष भारत से अलग कर विशेष अधिकार प्रदान करता है। मुसलमानों को हज यात्रा के लिए हर वर्ष अरबों रुपये की सब्सिडी (Subsidy) सरकारी कोष से दी जाती है। संसार में और कोई देश ऐसा नहीं है जो मुसलमानों को हज की यात्रा करवाने के लिए जनता से प्राप्त टैक्स का धन खर्च करता हो।

किसी भी दूसरे देश में जो व्यक्ति सारे देश के लिए तथा सभी नागरिकों के लिए समान कानून की व्यवस्था की बात करता है वह पंथनिर्पेक्ष माना जाता है और जो अलग–अलग कौमों के लिए अलग–अलग कानून की मांग करता है वह सम्प्रदायिक माना जाता है। परन्तु भारत में स्थिति इसके उलट है। सबके लिए समान कानून की माँग करने वाला व्यक्ति साम्प्रदायिक माना जाता है। मुसलमानों को हज यात्रा के लिए सब्सिडी देना सारी दुनिया में पंथनिर्पेक्षता का उल्लंघन माना जाता है। पर भारत सरकार इसे पंथनिर्पेक्षता का सबूत मानती है और उसका विरोध करने वालों को साम्प्रदायिक मानती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत सरकार पंथनिर्पेक्षता की सर्वमान्य परिभाषा को स्वीकार नहीं करती, बल्कि उसके उलट चलती है। जहाँ पश्चिमी देशों की विचार धारा पंथनिर्पेक्षता बुद्धिवाद, मानवता और सार्वभौमिकता के लिए खड़ी है वहीं भारत में यह बुद्धिहीनता, अमानवता और तंग दिली की परिचायक है, तथा वोट बैंक के लिए संरक्षण का काम करती है। इससे समाज में और राष्ट्र में विघटन, अन्याय और विद्वेष पैदा हुए हैं।

'सर्वधर्म समभाव' का नारा देकर ऐसी ही एक झूठी कसरत भारत सरकार ने की है। अर्थात सब मज़हबों को समान दृष्टि से देखो। यह कैसे सम्भव है? इस्लाम में गैर–मुसलमान को काफिर माना गया है और जिहाद के नाम से काफिरों पर अत्याचार करना, उन्हें गुलाम बनाना, उनका कत्ल करना, उनकी सम्पत्ति को लूटना, उनकी बहन–बेटियों का अपहरण करना और उनके साथ बलात्कार करना बड़ा पवित्र माना गया है तथा स्वर्ग में जाने का साधन माना गया है। और भी, इस्लाम में एक मुसलमान को गैर–मुसलमान से मित्रता करने से रोका गया है और जो मुसलमान किसी गैर–मुसलमान से मित्रता करने से रोका गया है और जो मुसलमान किसी गैर मुसलमान से मित्रता करता है वह भी काफिर माना जाता है। मुसलमान गाय का कत्ल करना जायज मानते हैं जबकि हिन्दू गाय को मारना महापाप मानते हैं।

ऐसा ही झूठ सन्देश देने वाला गीत 'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना' बड़ा झूम–झूम कर गाया और पढ़ाया जाता है। जबकि इतिहास गवाह है संसार में जितनी मार–काट, लूट–पाट, बलात्कार और अत्याचार इस्लाम के अनुयाईयों ने मजहब के नाम पर गैर–मुसलमानों पर किए हैं, और किसी भी कारण से नहीं हुए। मजहब के कारण ही भारत से कट कर पाकिस्तान और बांग्लादेश अलग देश बने थे। मज़हब के कारण ही वहाँ पर हिन्दुओं पर क्रूरतापूर्ण अत्याचार करके उन्हें वहाँ से भगा दिया गया है। मज़हब के कारण ही कश्मीरी पण्डितों पर अत्याचार करके उन्हें वहाँ से भगा दिया गया है। भारत पर और सारी दुनियां में जो आतंकवादी हमले हुए हैं और हो रहे हैं वे लगभग सारे मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा मजहब के कारण ही हो रहे हैं। ऐसा करने के लिए मुसलमानों को उनकी धार्मिक पुस्तक कुरान तथा हदीस के आदेश हैं। एक मुसलमान गैर–मुसलमान को मारकर गाजी की पदवी पाता है, जो इस्लाम में सबसे बड़ी पदवी मानी जाती है।

भारत को सही अर्थों में पंथनिर्पेक्षता को अपनाने की जरूरत है। देश में कोई भी कानून किसी भी मज़हब के आधार पर न बना हो। देश के सभी कानून सभी नागरिकों के लिए तथा सभी स्थानों के लिए एक से समता, राष्ट्रीयता, सत्य, न्याय और मानवता के आधार पर बने हों। मज़हब सभी के लिए एक निजी और व्यक्तिगत विषय रहे। इसे सार्वजनिक और राष्ट्रीय मुद्दा न बनाया जाए।

831 सैक्टर 10
पंचकूला, हरियाणा 0172–4010679

बलशाली विकसित भारत के स्वप्नद्रष्टा डॉ अब्दुल कलाम

● देव नारायण भारद्वाज

सृष्टि के आदिकाल से इस भारत–वसुन्धरा पर ऐसे ज्ञान–विज्ञान बत्ता ऋषियों का आविर्भाव होता रहा, जिन्होंने अपने अनवरत अनुसन्धान से न केवल अपनी मातृभूमि को, प्रत्युत अखिल विश्व–ब्रह्माण्ड को समृद्ध, सभ्यता एवं संस्कृति की रश्मियों से आलोकित किया है। इसी परम्परा को परिपुष्ट करने वाले जिस सपूत पर आज भारतमाता को गर्व है वह हैं भारतरत्न डॉ. अब्दुल कलाम।

भारतवर्ष के तमिलनाडु प्रदेशस्थ पवित्र नगर रामेश्वरम् में 15 अक्टूबर 1931 को साधारण साक्षर पिता जैनुलबद्दी एवं सरल धार्मिक स्वभाव की माता आशिम्मा के घर इनका जन्म हुआ था।

अब्दुल कलाम (बालक कलाम) नियमित रूप से रामेश्वरम् के शिव मन्दिर जाते थे। मन्दिर के पुजारी इनके पिता के अच्छे मित्र थे। अस्तु इन्हें इस्लाम के साथ–साथ हिन्दू धर्म की जानकारी भी हो गई थी।

कलाम ने हाईस्कूल रामनाथपुरम् में बी.एस.सी. तिरुचिरापल्ली में करके इंजीनियरिंग की शिक्षा के लिए मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नालोजी में प्रवेश लिया। घर की आर्थिक दशा इतनी दयनीय थी कि इनके उक्त संस्थान में प्रवेश–व्यय के लिए आवश्यक एक हजार रुपए इनकी बहन को अपनी सोने की चूड़ी और जंजीर को गिरवी रखकर जुटाने पड़े। तकनीकी ज्ञान के साथ–साथ टालस्टाय, स्कॉट, हार्डी की कृतियाँ तथा नक्षत्र, अन्तरिक्ष व चन्द्रमा सम्बन्धी काल्पनिक वैज्ञानिक कहानियाँ भी पढ़ते थे। इनके एक मित्र कर्मकाण्डी तमिल ब्राह्मण तथा दूसरे ईसाई परिवार से थे। इस मैत्री ने इनके स्वभाव में स्नेह, सामंजस्य, सहिष्णुता एवं सहकार के चार चाँद लगा दिए थे।

रक्षा मन्त्रालय की प्रयोगशाला में वरिष्ठ वैज्ञानिक सहायक पद पर 1958 में अपने प्रथम योगदान के बाद इनका प्रगति वाहन सोपान दर सोपान ऊपर उठता गया। कानपुर में वायुयान–अनुरक्षण का प्रशिक्षण लिया, बंगलौर में एयरोनोटिकल विकास संस्थापन किया, राकेट अभियन्त्रण, अंतरिक्ष शोध, केरल के तिरुअन्तपुरम् के समीपस्थ थुम्बा में राकेट–प्रक्षेपण स्थल–निर्माण कर भारत को 1962 में राकेट युग के अग्रसारण अभियान में सहयोगी बने। इनके कार्य से प्रभावी होकर सरकार ने इन्हें अमेरिका के नासा के एक प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने का सुअवसर प्रदान किया। यहाँ इन्होंने एयरोस्पेस तकनीक का अध्ययन किया। बाद में मेरीलैण्ड जाकर उपग्रह प्रणाली का ज्ञानार्जन किया। अन्तिम चरण में ये बॉलप द्वीप स्थित नासा केन्द्र पर गए; जहाँ इन्होंने एक चित्रावली में अश्वेत जानों को रोकेट से वार करते देखा। टीपू सुल्तान के काल में भारत ने राकेट क्षेत्र में जो प्रगति की थी, उसे देखकर इन्हें अपनी भारतीयता पर गर्व हुआ। फलतः इनका इस क्षेत्र में समर्पण बढ़ता गया। नासा से भारत लौटने पर भारत में रोहिणी आदि राकेट छोड़ने का क्रम चालू हो गया।

1962 व 1965 के युद्धों ने भारत को अपनी रक्षा प्रणाली में आत्मनिर्भरता हेतु बाध्य कर दिया था। स्वदेशी उपग्रह–प्रक्षेपण की योजना 1968 में बनी। चेन्नई से 100 कि.मी. दूर 'श्री हरिकोटा' का चयन हुआ और थोड़े–थोड़े अन्तराल में पृथ्वी, आकाश, नाग, त्रिशूल, अग्नि आदि प्रक्षेपणास्त्रों के व्योम व्यापी होने से भारत की ज्योति ज्वाला बनकर विश्वभर में उजाला करने लगी और स्वराष्ट्र स्वाभिमान से झूम उठा।

15 अक्टूबर 1991 में डॉ. कलाम अपनी षष्टिपूर्ति पर राज सेवा से अवकाश चाहते थे। ऐसा इसलिए संभव नहीं हुआ; क्योंकि इन्हें अभी और प्रकाश करना था। इन्हें रक्षामंत्री का वैज्ञानिक परामर्श दाता तथा रक्षा अनुसन्धान एवं विकास विभाग के सचिव का दायित्व सौपा गया। ये प्राविधिक सूचना–भविष्य वाचन एवं मूल्यांकन परिषद (टिफैक) के अध्यक्ष भी बनाए गए। इसके द्वारा ही 'टेक्नालोजी–विजन 2020' का महत्त्वपूर्ण प्रारूप तैयार किया। दोबारा 1998 में हुए एक के बाद एक पाँच परमाणु परीक्षणों से इनका नाम शीघ्र प्रकाश बनकर छा गया।

डॉ. कलाम की जिन महनीय वैज्ञानिक उपलब्धियों की झलक यहाँ प्रदर्शित की गई है; उन्हें वे केवल अपने योगदान की फलश्रुति न मानकर, सम्पूर्ण उस संगठन की कृति मानते हैं; जिसका एकांग बनकर वे संकल्पबद्ध हुए थे। जहाँ उन्होंने अधीनस्थों के सुझाव–संकेतों का समर्थन किया; वहीं उन्होंने अपने उच्च वैज्ञानिक अधिकारी निर्देशकों के आदेश, अनुशासन एवं मार्गदर्शन का सदा ही श्रद्धापूर्वक अनुपालन किया। प्रो. साराभाई ने साक्षात्कार में इनका कहटोर परीक्षण किया था और सक्षम समझ कर इन्हें गुरुतर दायित्वों पर पदारुढ़ किया था। प्रो. साराभाई के 1971 में निधन से इन्हें आघात तो लगा, किन्तु आजीवन वे इनकी कृतित्व प्रेरणा के आधार बने रहे।

शाकाहार, सादा जीवन उच्च विचार; पवित्र कुरान पुनीत पावन गीता के नियमित स्वाध्याय से अर्जित आत्म–परिष्कार ने डॉ. कलाम के प्रमुख व्यक्तित्व को आस्तिकता एवं निष्काम कर्मयोग के श्रृंगार से सज्जित कर दिया। पच्चीस से अधिक विश्वविद्यालय इन्हें डी.एस.सी. की मानद उपाधि से महिमा मण्डित करने के लिए दौड़ पड़े। अविरल श्रम के मूल, तपश्चर्या के तनों, साधना के पत्तों एवं सुयश के फूलों वाले सुदक्ष वृक्षों में जो फल झड़ते हैं वे कहलाते हैं– पुरस्कार–पुरस्कार–पुरस्कार इसी भाँति डॉ. कलाम के जीवन में पुरस्कार प्रतिफलित होने लगे। नेशनल डिजायन पुरस्कार, डॉ.बीरेन राय स्पेश पुरस्कार, नेशनल नेहरू पुरस्कार, जी.एम. मोदी विज्ञान पुरस्कार, एच.के.फिरोडिया पुरस्कार, बाई. नायडुम्मा स्मृति पदक, राष्ट्रीय एकीकरण इन्दिरा गांधी पुरस्कार तथा वीर सावरकर पुरस्कार की मणिमाला डॉ. कलाम ने धारण की। इंतना ही नहीं राष्ट्र ने सन् 1981 में पद्म विभूषण; तथा 1997 में सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' से इनको अलंकृत करके अपने महापुरुषों की यश आकाश गंगा का उज्ज्वल नक्षत्रवत सम्मान किया।

अपनी 'अग्नि की उड़ान' (WINGS OF FIRE) 'तेजस्वी मन' (IGNITED MIND) आदि कृतियों के माध्यम से इन्होंने राष्ट्र को अपने अनुभव–संस्मरण का प्रसाद वितरित किया। राष्ट्र के युवा सन्त टंकारा गुजरात के महात्मा धर्मबन्धु के साथ डॉ. कलाम गुजरात प्रान्त के बृहत आर्यवीर दल शिविर में युवाओं को सम्बोधित करके लौटे ही थे कि इन्हें ज्ञात हुआ कि इनका आह्वान 'भारत के राष्ट्रपति' के गौरवमय पदासन के लिए किया गया है 15 जुलाई 2002 को हुए निर्वाचन में ये भारत के महामहिम राष्ट्रपति पद के लिए चुन लिए गए। भारत के इतिहास में यही प्रथम वैज्ञानिक हैं; जो राष्ट्र के सर्वोपरि आसन पर विराजमान हुए हैं।

'वरेण्यम्' एम. आई.जी.
भूखण्ड सं.45
अवन्तिका कालोनी, रामघाट मार्ग, अलीगढ़

☞ *पृष्ठ 5 का शेष*

इन्द्रिय–निग्रह का ....

हैं। इस नदी को पार करना बहुत कठिन है, परन्तु इस नदी को शुद्ध अन्तःकरण वाले त्यागी, तपस्वी, विरक्तयोगी पार करके बन्धनों से छूटकर ब्रह्मनन्द को भोगते हैं।

राग, द्वैष, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विकार ही व्यक्ति को इस नदी के भँवरों में फँसा देने वाले हैं इसलिए इससे बचने की बहुत जरूरत है मगर इनसे बचने के लिए इन्द्रजित बनना बहुत ही जरूरी है। विषय विकारों की कलुषता हमें परमात्मा के आनन्द तक नहीं पहुँचने देती। क्योंकि ऐसे व्यक्ति का अन्तःकरण साफ नहीं होता है। ये वासनाएँ ही हमे असुर बना देती है और इनका निराकरण करके ही व्यक्ति देव बन जाता है। वेद में इन असुर भावनाओं से मुक्ति दिलाने के लिए बहुत सुन्दर प्रार्थना की गई है–

त्वं ह त्यदिन्द्र सप्त युध्यन्पुरो वज्रिन्पुरुकुत्साय दर्दः।
बर्हिर्न यत्सुदासे बृथा बर्गंहो रान्वरिवः पूरवे कः।।
(ऋ. 1–63–7)

हे परम पिता परमात्मा.....बल के समस्त कार्यों को करने वाले प्रभु! हे वज्रहस्त विभु आप उन असुरों की सात नगरियों को युद्ध करते हुए विदीर्ण करते हो। हे परमात्मा! आप अपने सुदास को घास की भाँति अर्थात् अनायास ही पापों से मुक्त कर देते हैं। कृपासिन्धो! आप पुरु अर्थात् परोपकारी को ही अपने आनन्दरूपी धन का पात्र बनाने वाले हो.....। इस मंत्र में असुत्व से मुक्ति पाने का बहुत ही सुन्दर उपदेश दिया गया है। परमात्मा उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है। परमात्मा की शरण में जाकर जो परोपकारी बनकर उसकी कृपा का पात्र बना जा सकता है। जिसे परमात्मा अपना कृपापात्र बना देता है उसके लिए वह असुरों के सात पुरों को ध्वस्त करने वाला बन जाता है। ये असुरों के सात पुर कौन हैं? दो कान, दो नासिका छिद्र, दो आँखें और एक मुख। इन्हें दोष रहित करना ही असुरों को ध्वस्त करना है। इन अपनी ज्ञानेन्द्रियों से हम चाहें तो देवत्व प्राप्त कर लें और चाहे तो असुरत्व। इसलिए व्यक्ति को चेतावनी देते हुए कहा गया है–

आत्मन्निच्छसि हन्त! शाश्वतपुरीमार्गे विहर्त्तुं यदि,
भ्रातः!संयमवर्मणा कुरु तदा, रक्षाविधि सर्वतः।
नो चेन्द्रिययतस्करैस्तव हठात्तीक्ष्णाग्रभूरि स्फुरच–
चिन्ताभल्लशतैर्विभिद्य मनसो, ग्राह्यो विवेको मणिः।।

हे भोले आत्मन्! यदि तू उस सनातन आध्यात्मिक मार्ग में विचरना चाहता है तो हे भाई! मन और इन्द्रियों के नियंत्रण रूपी कवच से अपनी रक्षा का सब ओर प्रबन्ध कर ले, अन्यथा इन्द्रिय रूपी तस्कर चिन्ता रूपी तीखे चिलचिलाते सैकड़ों भालों से तुम्हारे मन को भेदकर तुम्हारे मन की विवेक रूपी मणि को जबरदस्ती हर ले जाएँगे.....

वैदिक वशिष्ठ आश्रम (महर्षि दयानन्द धाम), महादेव, सुन्दरनगर–174401 (हि.प्र.)

बृहत्तर–भारत–कर्तारम् कृष्णं वन्दामहे

● प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

पाँच सहस्र वर्षों से भी पुरानी बात है। द्वापर युग का अन्त और कलियुग का आरम्भ होने वाला था। मेगस्थनीज के यात्रा के विवरणों के आधार पर आज 2070 वि०, 2012 ई में 5074 वर्षों से पूर्व की बात है। भारतीय इतिहास की गणना में भगवान् श्रीकृष्ण का काल 5152 वर्ष के लगभग प्राचीन है। श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के पश्चात्, महाभारत युद्ध के पश्चात् 36 वर्ष जीवित रहे थे। भारतवर्ष के इतिहास की दृष्टि से यह द्वापर और कलियुग का सन्धिकाल ऐसा कालखण्ड है जब भारत वसुन्धरा पर प्रतिकूलता और विपत्ति की काली घटाएँ घुमड़–घुमड़ कर घिरती चली आ रहीं थीं। कहने को तो जरासन्ध मगध में सम्राट था और अन्य सब माण्डलिक राजा थे। किन्तु वास्तव में सम्पूर्ण भारत देश खण्ड–विखण्ड होकर राष्ट्रीय दृष्टि से आत्माघाती मार्ग पर बढ़ता चला जा रहा था। सम्राट जरासन्ध इतना अन्यायी था कि उसने 76 आंचलिक राजाओं को गिरिव्रज के कारागार में बन्दी बना रखा था और एक सौ की संख्या पूरी होने पर उन्हें महादेव की बलि चढ़ा देने की योजना बना रहा था।

इधर हस्तिनापुर में भीष्म जैसे अजेय–बाल–ब्रह्मचारी और द्रोण जैसे शस्त्रास्त्रों के दिग्गज आचार्य थे, किन्तु राष्ट्रीयता की दृष्टि से सब बेकार। अन्धे धृतराष्ट्र की राज्य लिप्सा, कौरव–पाण डवों का कुलघाती संघर्ष इतना भारी पड़ रहा था कि इन सबके न कोई उच्च राष्ट्रीय आदर्श, न राष्ट्रनीति, न अन्याय का विरोध, कुछ भी न रह गया था। इनकी नाक के नीचे ही इन्हीं के सम्बन्धी, कुन्ती के मातृ पक्ष में, कंस मथुरा में अपने पिता उग्रसेन से यदुवंशियों का राज्य छीनकर उनको कारागार में बन्दी बनाकर स्वयं राजा बन बैठा था और इनके नजदीकी सम्बन्धी हस्तिनापुर वालों के भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र के कान में जूँ तक न रेंगी। यह था नैतिकता और राष्ट्रीयता के पतन का एक ज्वलंत उदाहरण। कहने को यदुवंशियों के 18 कुल थे और 18 हजार यदुवंशी थे किन्तु सब कंस से डरते थे। क्योंकि कंस सम्राट जरासन्ध का दामाद था। जरासन्ध की दो पुत्रियाँ ''अस्ति'' और ''प्राप्ति'' कंस को ब्याहीं थीं। अतः कंस को अपने श्वसुर जरासन्ध का संरक्षण प्राप्त था।

सम्पूर्ण भारत का राष्ट्रीय परिदृश्य आंचालिक राज्यों में परस्पर संघर्षरत था। पश्चिम में मद्र (ईरान) में शल्य, गांधार (अफगानिस्तान) में शकुनी, सौवीर सिन्धु में जयद्रथ, हस्तिनापुर में कौरव–पाण डवों का गृह युद्ध, मथुरा में कंस, इधर पूर्व प्राग्ज्योतिषपुर में नरकासुर, भगदत्त, मगध में जरासंध, सम्पूर्ण देश अन्याय, अत्याचार, पारस्परिक विद्रोह–विग्रह में कराह रहा था। धर्म की ग्लानि हो रही थी और अधर्म बढ़ता जा रहा था। इसी समय भारत वसुन्धरा का राष्ट्रीय उद्धार करने के लिए **श्रीकृष्ण चन्द्रोदय** हुआ। लोकनायक श्रीकृष्ण ने अपने जीवन के उद्देश्य की घोषणा कर दी –

''परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे–युगे ।।'' गीता० 4–7

अर्थात् श्रीकृष्ण के जन्म और जीवन का उद्देश्य अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना तथा दुष्टों का दमन और सज्जनों, साधु–सन्तों की रक्षा करना था। भाद्रपद की कृष्ण अष्टमी को आनन्दकद देवकीनन्दन श्रीकृष्ण का जन्म हुआ। श्रीकृष्ण और उनके बड़े भाई बलराम धीरे–धीरे बड़े होने लगे और मल्लयुद्ध में प्रवीण होने लगे। यदुवंशी 18 कुलों में 18 हजार थे और वे कंस को हटाकर उग्रसेन को यादव संघ का राजा बनाना चाहते थे, किन्तु सम्राट जरासन्ध के संरक्षण में रहने के कारण जरासन्ध के जमाता कंस को युद्ध में हराना असम्भव था। अतः श्रीकृष्ण ने द्वन्द्व युद्ध में कंस को मार डालने की योजना बनाई। श्रीकृष्ण और बलराम की मल्ल विद्या का यश चारों और फैलने लगा। कंस श्रीकृष्ण और बलराम को मल्ल युद्ध में मरवा डालना चाहता था। कंस के दो दरबारी मल्ल युद्ध में योद्धा थे मुष्टिक और चाणूर। कंस ने इन्हें नियुक्त किया कि वे दोनों मल्लयुद्ध में कृष्ण और बलराम को मार डालें। कंस के दरबार में मल्लयुद्ध का आयोजन हुआ। कृष्ण ने चाणूर और बलराम ने मुष्टिक को पराजित करके जान से मार डाला। ये देखकर कंस घबरा गया और अखाड़े से भागने लगा। इधर सम्राट जरासन्ध की दोनों पुत्रियाँ विधवा हो गयीं और जरासन्ध का क्रोध यदुवंशियों पर बहुत बढ़ गया और वह मथुरा में यादव संघ को नष्ट करने के लिए आक्रमण करने लगा। बाधित होकर यदुवंशी मथुरा छोड़कर पश्चिम समुद्र के किनारे द्वारका में बस गये। श्रीकृष्ण और बलराम के सामने अस्त्र–शस्त्रों के संग्रह का प्रश्न था। दोनों ही अस्त्र–शस्त्रों की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अवन्तिपुरी में सान्दीपनि ऋषि के गुरुकुल में गये –

''अहोरात्रेश्चतुः षष्ट्या तदद्भुतमभूद् द्विजः । अस्त्रग्रामशेषञ्च प्रोक्तमात्रमवाप्य तौ ।।'' वि० पु०

भावार्थ यह हुआ कि दोनों भाई कृष्ण और बलराम अवन्तिकापुरी में सान्दीपनि आचार्य के पास अस्त्र–शस्त्र सीखने, प्राप्त करने के उद्देश्य से गए। वहाँ वे 64 रात्रिदिन परिश्रम करके अद्भुत रूप से सम्पूर्ण अस्त्र–शस्त्रों को प्राप्त करने में सफल हुए।

भारतवर्ष का सम्राट जरासंध था और बिना जरासन्ध का वध किए बृहत्तर भारत संघ स्थापना नहीं हो सकती थी। जरासन्ध के साथ ही दुष्ट अन्यायी राजाओं का एक धड़ा बन गया था। मथुरा में कंस, मगध में जरासन्ध असम में नरकासुर, हस्तिनापुर में दुर्योधन, सिन्ध में जयद्रथ, मद्र (ईरान) में शिशुपाल सभी आंचलिक राजा थे। इन्द्र प्रस्थ में युधिष्ठिर को माध्यम बनाकर श्रीकृष्ण बृहत्तर भारत, विशाल भारत को एक संघ राज्य बनाने का सपना देख रहे थे। इस भारत महासंघ के निर्माण में सबसे बड़ी बाधा सम्राट जरासन्ध ही था। उसको सेना की लड़ाई में पराजित करना असम्भव था। श्रीकृष्ण ने कंस को द्वन्द्व युद्ध में मारा था। यह श्रीकृष्ण की सुपरीक्षित नीति थी। श्रीकृष्ण ने भीम और अर्जुन को साथ लेकर जरासन्ध की राजधानी गिरिव्रज की यात्रा की। तीनों स्नातक के वेश में वहाँ पहुँचे। श्रीकृष्ण ने परिचय दिया कि हम तीनों स्नातक हैं और इन दोनों का मौनव्रत है। आज आधी रात ये मौन व्रत तोड़ेंगे, उसी समय हम आपसे वार्तालाप करेंगे। सम्राट् जरासन्ध ने अतिथियों को यज्ञशाला में ठहरा दिया। रात बारह बजे जब जरासन्ध उनसे मिलने आया तो श्रीकृष्ण ने तीनों का परिचय दिया और जरासन्ध को द्वन्द्व युद्ध के लिए ललकारा। जरासन्ध का भीम से मल्ल युद्ध आरम्भ हुआ। तेरह दिन लगातार कुश्ती होती रही। चतुर्दशी को जरासन्ध कुछ शिथिल होने लगा। कृष्ण ने भीम को प्रोत्साहित किया और भीम ने जरासन्ध को पटककर उसकी टाँगे फाड़ दीं। जरासन्ध मारा गया। श्रीकृष्ण की नीतिमत्ता थी कि बिना किसी रक्तपात के मगध का साम्राज्य–सेना–कोष सब युधिष्ठिर के अधीन हो गए। कृष्ण ने बन्दी 76 राजाओं को स्वतंत्र कर दिया और मगध के सिंहासन पर जरासन्ध के पुत्र सहदेव का राज्यभिषेक कर दिया और इस तरह मगध भी कृष्ण–युधिष्ठिर के अनुकूल हो गया।

महाभारत युद्ध के सफल नेता श्री कृष्ण – महाभारत का युद्ध कहने को तो कौरव–पाण्डवों का गृह युद्ध था किन्तु वास्तव में यह भारतखण्ड के भाग्य का निर्णायक युद्ध था। कौरव का पक्ष भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि के कारण बड़ा प्रबल दुर्जेय था। श्री कृष्ण को सम्पूर्ण परिदृश्य से हटा देने पर पाण्डव पक्ष अन्धकार में डूब जाता है। श्रीकृष्ण न होते तो भीष्म की शरशय्या, द्रोण–जयद्रथ–कर्ण–दुर्योधन का वध का क्या रूप बनता ? श्रीकृष्ण ने पाण्डवों की रक्षा की, शत्रुओं का वध करवाया। युधिष्ठिर सिंहासनारूढ़ हुए। अश्वमेध यज्ञ हुआ। सैकड़ों राज घराने एक सम्राट् के अन्दर आ गए। खण्ड–खण्ड विभक्त भारत महाभारत बना। यह सब श्री कृष्ण के नेतृत्व के कारण हुआ। **काबुल गान्धार से असम तक सम्पूर्ण भारत एक राष्ट्र महाभारत बन गया, यह कृष्ण की ही सूझ बूझ थी।**

राजनीतिक दृष्टि से, राजनीति विज्ञान (Political Science) की दृष्टि से, श्रीकृष्ण का महाभारत निर्माण या युधिष्ठिर का अश्वमेघ यज्ञ केवल सम्राट बनने की घोषणा मात्र न था। श्रीकृष्ण ने एक सम्राट के झण्डे के नीचे एक संघशासन (Federal State) की स्थापना कर डाली थी। श्रीकृष्ण स्वयं राजा न थे। किन्तु राजा–निर्माता अवश्य थे। उग्रसेन को कंस वध के पश्चात् राजा इन्होंने बनाया था। जरासन्ध की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र सहदेव को मगध का राजा इन्होंने बनाया। युधिष्ठिर का राज भी तो इन्हीं का निर्माण था। युधिष्ठिर ने अश्वमेघ यज्ञ किया, वे सम्राट भी हुए किन्तु श्री कृष्ण ने युधिष्ठिर के साम्राज्य को संघीय स्वरूप दिया। युधिष्ठिर के साम्राज्य का प्रत्येक राज्य अपनी आन्तरिक राजनीति, परम्परा व्यवस्था, आर्थिक विकास, शिक्षा सभ्यता, रहन–सहन में पूर्ण स्वतन्त्र था। यह प्रत्येक राज्य की आंचलिक स्वायत्तता के साथ सम्पूर्ण भारतवर्ष को एक राष्ट्र में आबद्ध कर महाभारत बनाने की योजना श्रीकृष्ण का राजनैतिक उद्देश्य था। यह उनका महाभारत बनाने का नेतृत्व था।

श्रीकृष्ण चरित्र की अल्पज्ञात घटना – सामान्य रूप में श्री कृष्ण वेद, वेदांग, विज्ञान आदि के विद्वान् अप्रतिम योद्धा थे। श्रीकृष्ण अद्भुत, सदाचारी, ब्रह्मचारी, तपस्वी महापुरुष थे। अपने पुत्र प्रद्युम्न के जन्म के सम्बन्ध में एक रहस्य का उद्घाटन श्रीकृष्ण ने स्वयं ही सौप्तिक पर्व में किया है –

''ब्रह्मचर्य महद् घोरं चीर्त्वा द्वादश वार्षिकम् । हिमवत् पार्श्वमभ्येत्य यो मया तपसार्जितः ।। समान व्रतचारिण्यां रुक्मिण्यां योऽन्वजायत । सनत्कुमार तेजस्वी प्रद्युम्नो नाम मे सुतः ।।'' अ० 12/30–31

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पत्र/कविता

लिविंग टुगैदर

लिविंग टुगैदर की प्रवृत्ति यदि महानगरों में पैर पसार रही है तो इसे किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। न यह नैतिकता, व्यापार–व्यवसाय या शिक्षा–अर्जन और न व्यक्तिगत सुख–शांति शारीरिक मानसिक एवं आत्मिक स्वास्थ्य के लिए हितकर है। जिस कार्य में भय–शंका एवं लज्जा अनुभव हो, वह कार्य न करना ही व्यक्ति एवं समाज के लिए सुखकर है।

क्या कोई भी बाल बच्चों वाला, घर गृहस्थी लेकर सुख चैन से जीवन–यापन करने वाला मकान मालिक ऐसे जोड़ों की जाँच नहीं करना चाहेगा? यदि आज नहीं तो कुछ दिनों बाद तो यह पोल अवश्य खुलेगी कि उसके किरायेदार वैध पति–पत्नी नहीं हैं।

लिविंग टुगैदर में एक खतरा यह भी है कि विवाहित युवा एवं विवाहित युवती भी अधिक प्रगतिशीलता का भ्रम लेकर एक फ्लैट (कमरे) में रहने का आयोजन कर सकते हैं। विशेषतया वे जो अपने गाँव–नगर से अतिदूर महानगर में शिक्षा प्राप्ति या कमा–खाने के लिये आये हों। उनके घर वाले उनके उज्ज्वल भविष्य या अपनी खातिर उनके परदेश में जाकर कमाई कर घरवालों को खिलाने के विश्वास पर जीते हैं, जबकि वे गुल छर्रे उड़ाते हुए अपने धन एवं धर्म अर्थात् घरवाली या घर वाले के विश्वास को पलीता बता रहे हों।

क्या आग के पास रखा घी पिघलेगा नहीं? क्या पर पुरुष और पर स्त्री बिना सैक्स जीवन में उतरे एक कमरे में रह सकते हैं। सच पूछें तो विदेशी विचार धाराओं में भारत जैसे महानतम संस्कृति के धनी देश को भी उसी तरह बर्बाद किया है जैसा कि विदेशियों के विगत 1000 वर्ष के शासन ने।

किराया मंहगा होना, शादी से पहले एक दूसरे को जान लेना और फ्लैट शेयर करना, लक्ष्मी पंडित, फैशन मॉडल श्वेता, डेटिंग आदि 2 का लाभ लेकर नई पीढ़ी को, भारत की सुसंस्कृत सन्तान को पथ–भ्रष्ट करने की इजाजत यदि कोई संविधान की धारा या कोई कानून देता है तो हमारे राजनैतिक दलों को सामाजिक संगठनों के साथ मिलकर ऐसे प्रावधानों को संशोधित कर देना चाहिए।

समाज इस बात को समझ ले कि लिविंग टुगैदर का सर्वाधिक दुष्प्रभाव युवती पर ही पड़ने वाला है।

भारतीय आर्य वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में ही नहीं मुसलमानों में भी इस लिविंग टुगैदर को निन्दनीय माना जाता है। नारी अबला है, भावुक है। किशोर वय और युवावस्था में ही क्या अंधेड़ अवस्था में भी साथ रहने पर–पर पुरुष के सम्पर्क में सत्पथ से विचलित हो जाना संभव है जिसका प्रतिफल उसके हँसते–खेलते परिवार, ससुराल, शौहर या अविवाहित हो तो उसका स्वयं का व्यक्तित्व, भविष्य, उसके माता–पिता, यहाँ तक कि उसका संपूर्ण कुल ही कलंकित, लांछित एवं बर्बाद हो जाता है। अकल्पनीय संकटों के पहाड़ों के तले उन्हें ही नहीं ऐसी लड़की एवं नारी को भी अचिन्त्य काल तक या आजीवन दबे रहना पडता है।

शहरों में युवतियों को नौकरी के लिए, पढ़ने के लिए, उच्च कैरियर बनाने के लिए जाना है तो या तो उनके माता–पिता स्वतंत्र कमरा किसी सदगृहस्थ के भवन में लेकर रखें या एक कमरे या फ्लैट में 2–3–4 ऐसी भद्र लड़कियाँ/महिलाएँ रहें, पारस्परिक परिचय एवं मित्रता का वातावरण बनावें। उनके माता–पिता/ पति, सास–ससुर का भी परस्पर परिचय बने। आते–जाते रहें, साथ उठें–बैठें, खावें–पिवें, नगर के पैसे वाले लोग उनके लिए होस्टल की व्यवस्था कर सकते हैं। सरकार भी, सेवा–भावी समाजिक–धार्मिक संस्थाएं भी ऐसा कर सकती हैं। सरकार का तो यह दायित्व है।

स्पष्ट बात यह है कि लिविंग टुगैदर का आधार किराया खर्च करने की सामर्थ्य न होना उतना नहीं है जितना कि परदेश में रहकर गुलछर्रे उड़ाना है, भोग–विलास के अजैविक संसाधन ढूंढ़ना है। अपराध की भ्रष्ट आचरण की मानसिकता एवं आचरण वाले भारत की १२१ करोड़ की जनसंख्या में १० लाख से अधिक नहीं होंगे। ऐसे दुराचारी लोगों के भ्रष्ट आपाधापी वाले उनकी दृष्टि में सुखद जीवन की खातिर राष्ट्र के निर्दोष सुसंस्कृत १२० करोड़ ९० लाख लोग क्यों दुःख सहें। सिगरेट पीने वाला १५% धुँआ ही स्वयं पीता है शेष ८५% तो वह भले लोगों को ही पिलाता है। इसलिए चाहे महानगर हो या जयपुर ही क्यों न हो प्रत्येक स्थान के अधिक से अधिक १०० लोगों को दुराचार की छूट देकर सारी बस्ती के शांति प्रिय, सुसंस्कृत सभ्य जन क्यों अपनी गृहस्थी बर्बाद करें। १०–२० लोगों के अपचारी जीवन की कालिख से करोड़ों के मुँह, उनके दैनिक जीवन की संस्कार संपन्नता अपसंस्कृति में क्यों परिवर्तित हों?। अतः ऐसे लिविंग टुगैदर को स्नेह से दुलराने की अपेक्षा इस पद्धति को कानून, सामाजिक विधि–निषेधों से अपराध माना जावे एवं तदनुकूल दंडित किया जावे।

डॉ मदन मोहन
२५२ चम्पानगर, गुर्जर की थड़ी,
जयपुर (राज.) ३०२०११

****

आज़ादी अब खतरे में है

देशवासियो अब तो जागो क्यों सोए हो चादर तान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

किसी समय यह देश हमारा सारे जग का था सरदार।
वेद सभ्यता, सदाचार का, जग में करता था प्रचार।।

चरित्र वान थे भारतवासी, हर जन के थे उच्च विचार।
ईश्वर के विश्वासी थे सब, सच्चाई का था व्यवहार।।

धर्म–कर्म की भले बुरे की, करते थे पूरी पहचान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

अश्पति, हरिश्चन्द्र, राम से इस भारत में थे सम्राट।
श्री कृष्ण अर्जुन पोरू से , वीरों के थे न्यारे ठाट।।

ऋषियों–मुनियों के सेवक थे, दुष्टों को देते थे काट।
बलवानों ने वेद विरोधी, दैत्य किए थे बाहर बाट।।

सत्य सादगी, सदाचार था, उन योद्धाओं की पहचान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

राणा भीमसिंह सांगा, प्रताप शिवा ये बांके वीर।
आन–बान पर मिटने वाले, वीर हुए गौरा हम्मीर।।

तेग बहादुर, गोविन्द सिंह, रणजीत सिंह, नलवा रणधीर।
देश–द्रोही हत्यारों के वे देते थे सीने चीर।।

बन्दा वैरागी बलिदानी, भारत का था पुत्र महान।
आज़ादी अब खतरे मे है, करो देश भारत का ध्यान।।

ऋषियों के प्यारे भारत में है अब उग्रवाद का जोर।
गौ हत्या हो रही रात–दिन, मारे जाते तीतर मोर।।

पनप गया आतंकवाद अब मौज उड़ाते डाकू चोर।
अबलाओं की लाज रही लुट, पाप यहां होता है घोर।।

घोटालों का यहां जोर है, व्याकुल हैं वैदिक विद्वान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

वीर शहीदों की कुर्बानी, भूल गए अब शासक लोग।
छीना झपटी मचा रहे हैं, लगा बुरा कुर्सी का रोग।।

अंगड़ाई लो बढ़ो समर में करो धर्म के मित्रो! काम।
बिस्मिल शेखर, भगत सिंह बन, ऊंचा करो देश का नाम।।

'नन्द लाल' ऋषि दयानंद के गाओ तुम, निशिदिन गुणगान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

पं. नन्दलाल निर्भय भजनोपदेशक
चलभाष: 9813845774
आर्य सदन बहीन जनपद पलवल (हरियाणा)

आर्यजगत् संबन्धी घोषणा
(फार्म–4 नियम 8 देखिये)

1.	प्रकाशन का स्थान	आर्य समाज कार्यालय आर्यसमाज भवन मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–10 001
2.	प्रकाशन अवधि	साप्ताहिक
3.	मुद्रक का नाम	प्रबोध महाजन
	क्या भारत का नागरिक है?	हाँ
	मुद्रक का पता	आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110 001
4.	प्रकाशक का नाम	प्रबोध महाजन
	क्या भारत का नागरिक है?	हाँ
	प्रकाशक का पता	आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली– 110 001
5.	सम्पादक का नाम	पूनम सूरी
	क्या भारत का नागरिक है?	हाँ
	संपादक का पता	आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110 001
	उन सभी व्यक्तियों के नाम पते जो समाचार–पत्र के स्वामी से तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत के हिस्सेदार हों।	आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली– 110 001

वेद ईश्वरीय ज्ञान है-अर्जुनदेव चड्ढा

डी ''वेद ईश्वरीय ज्ञान है वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ है, वर्तमान की अनेक समस्याओं का समाधान वेद में विद्यमान है। वेद मानवमात्र के कल्याणकारक हैं।'' उक्त उद्बोधन आर्य समाज कोटा के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने महर्षि दयानन्द वेद प्रचार समिति कोटा द्वारा विद्यालयों में वेद आयोजित प्रचार सप्ताह के अन्तर्गत विश्व भारती पब्लिक स्कूल वसुंधरा विहार में व्यक्त किये।

कार्यक्रम का प्रारंभ पौरोहित्य में देवयज्ञ से हुआ। यज्ञ में विद्यालय के प्राचार्य एस पी सिंह सहित उपस्थित महिलाओं छात्र–छात्राओं ने वेद मंत्रों के उच्चारण के साथ आहुतियां दी।

अरविन्द पाण्डेय ने कहा कि सृष्टि के प्रारंभ में ईश्वर ने प्राणी मात्र के कल्याण के लिए अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा ऋषि के हृदय में अन्तः प्रेरणा द्वारा वेद–ज्ञान प्रदान किया। ईश्वर ने बिना किसी ऊंच नीच तथा भेदभाव के वेद का ज्ञान सबके लिए प्रदान किया। शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

☞ *पृष्ठ 9 का शेष*

बृहत्तर भारत कर्तारम्....

इन श्लोकों का भाव यह है कि श्री कृष्ण ने अपनी पत्नी रुक्मिणी के साथ हिमालय की तराई में 12 वर्षों का महान् घोर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके तपस्या की और रुक्मिणी ने भी समान रूप से व्रत के अनुष्ठान में साथ तपस्या की। फिर दोनों ने सनत् कुमार जैसा तेजस्वी प्रद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न किया।

ऐसे चरित्रवान् योगेश्वर श्रीकृष्ण के चरित्र में रासलीला का प्रसंग पुराणयुग के रसिक कथाकारों की रसिक कल्पना मात्र है। श्रीकृष्ण का योगेश्वर योद्धा चक्र सुदर्शनधारी आदि स्वरूप का निदर्शन महाभारत में मिलता है। श्रीकृष्ण के जीवन से अधिक उनके गीता गायक स्वरूप ने संसार को प्रभावित किया है। श्रीमद्भगवत् गीता में श्रीकृष्ण के योग, ज्ञान, कर्म और भक्ति के उपदेशों का बहुत सुन्दर वर्णन है। श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का योगेश्वर स्वरुप बड़ा मनमोहक है। संजय ने गीता के अंतिम श्लोक में बहुत सुन्दर कहा है –

''यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥''
गीता–18–78

जहाँ, जिस पक्ष में योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं, जिस पक्ष में धनुर्धर अर्जुन हैं, उसी पक्ष में श्री, विजय, भूति और ध्रूवनीति है, यही मेरी सम्मति है।

ऐसे योगेश्वर श्रीकृष्ण की हम वन्दना करते हैं।

ईशावास्यम्
पी–30, कालिन्दी,
कोलकाता–700089
फोन – (033) 25222636
चलभाष – 09432301602

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 12-13 /03/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

डी.ए.वी. मलेरकोटला ने मनाया वार्षिक उत्सव एवम् पारितोषिक वितरण समारोह

डी.ए.वी. स्कूल मलेरकोटला ने अपना वार्षिक उत्सव एवं पारितोषिक वितरण समारोह उत्सव बहुत ही धूमधाम से मनाया गया। श्री मदन मोहन अंगरीश, श्री टी.सी.सोनी, श्रीमती अभिलाषा सोनी तथा श्री विजय रिखी जी ने गायत्री मंत्र उच्चारण करते हुए ज्योति प्रज्ज्वलित की। समारोह में चौथी कक्षा से लेकर बारहवीं कक्षा के उन विद्यार्थियों को मैडल प्रदान किए गए जिन्होंने 2012–13 में A1 ग्रेड प्राप्त किया।

उसके पश्चात् छात्रों द्वारा प्रस्तुत रंगारंग कार्यक्रम– शब्द गायन, पंजाबी लोक गीत, कव्वाली, पंजाबी नाटक, गरबा नृत्य पंजाबी नृत्य के साथ–साथ अंग्रेज़ी नाटक, नृत्य तथा गाने, पंजाबी गिद्दा और भंगड़ा ने दर्शकों का मन मोह लिया और झूमने के लिए मजबूर कर दिया। कराटे वाले विद्यार्थियों ने अपने करतब दिखाकर लोगों का मन जीत लिया। इस अवसर पर उन विद्यार्थियों को भी विशेष सम्मान दिया गया जिन्होंने खेल जगत् में अपने स्कूल का नाम रोशन किया है।

कार्यक्रम के अन्त में विद्यालय प्राचार्य श्री टी.सी. सोनी जी छात्रों तथा अभिभावकों को धन्यवाद किया।

गुरू नानक देव डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल भिक्खीविंड में हुई वैदिक प्रतियोगिता

गुरू नानक देव डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, भिक्खीविंड में 'आर्ययुवक सभा' शक्ति नगर, अमृतसर द्वारा करने की शान्तिकरणम्, ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना मंत्र, वैदिक सन्ध्या मंत्र और ऋषि दयानंद गुणगान कंठस्थ करने की प्रतियोगिता की गई। इसमें विद्यार्थियों ने मंत्रोच्चारण द्वारा उपस्थित अतिथि गण तथा निर्णायक मंडल को मंत्र–मुग्ध कर दिया।प्रतियोगिता में आए अतिथिगण श्री हीरा लाल जी, दिनेश जी तथा जतिंदर जी ने बच्चों के द्वारा मंत्रों उच्चारण की सराहना की। श्री

हीरालाल जी ने बच्चों को 'आर्य' बनने के लिए कहा और अपनी भारतीय संस्कृति के साथ जुड़े रहने के लिए प्रेरित किया। प्रधानाचार्य 'संजीव कोचर' ने आए हुए अतिथियों का हार्दिक स्वागत किया। उन्होंने विद्यार्थियों द्वारा मंत्रोंच्चारण की सराहना करते हुए कहा कि मंत्र हमें परमपिता परमात्मा के साथ जोड़ते हैं। 'ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना मंत्र' की टीम ने 500रु.का पुरस्कार जीता, ऋषि दयानंद गुणगान की टीम ने 1100 रु, वैदिक संध्या मंत्र की टीम ने 2100रु. और शान्तिकरणम् पाठ की टीम ने 3100 रु. जीते। प्रधानाचार्य ने विजेता विद्यार्थियों को हार्दिक शुभकामनाएँ और बधाई दी तथा भारतीय संस्कृति से जुड़े रहने के लिए प्रेरित किया।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, अशोक विहार का वार्षिक पुरस्कार समारोह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, अशोक विहार का वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह, 'अभिव्यक्ति–एक नई सोच'' धूमधाम से मनाया गया। विद्यालय के युवा उतसाही छात्रों ने रंगारंग खेल एवं सांस्कृतिक नृत्य प्रस्तुतियों द्वारा विश्व एकता एवं सद्भाव के संदेश को मानो जीवत कर दिखाया।

विश्व प्रसिद्ध पहलवान तथा ओलंपिक कुश्ती में रजत पदक विजेता श्री सुशील कुमार ने समारोह के मुख्यअतिथि पद की शोभा बढ़ाई। विद्यालय के स्पोर्ट्स कैप्टन द्वारा एकता की प्रतीक मशाल मुख्य अतिथि को हस्तांतरित की गई जिन्होंने मंगल ज्योति प्रज्ज्वलित की तथा मार्च पास्ट की सलामी लेकर समारोह का शुभारंभ किया।

समारोह में भाग लेने वाले सभी छात्र छात्राओं के अभिभावकों ने भी कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। तथा प्रस्तुत खेल, संस्कृति एवं शिक्षा के अद्भुत समन्वय की मुक्त कंठ से सराहना की।

विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती कुसुम भारद्वाज ने सभी उपस्थित जनों तथा अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए अपने संदेश में कहा कि खेल एवं शिक्षा ही वे सर्वोत्तम माध्यम हैं जिनके द्वारा विश्व में एकता एवं सद्भाव की भावना का प्रसारकरके हम शांतिपूर्ण विश्व के निर्माण के स्वप्न को वास्तव में साकार कर सकते हैं।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**